ओ३म्

सुधारक

गुरुकुल झज्जर का लोकप्रिय मासिक पत्र

वर्ष ६१ अंक १२ अगस्त २०१४ श्रावण २०७१ वार्षिक मूल्य १०० रु०

संस्थापक : स्व० स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती
प्रधान सम्पादक : आचार्य विजयपाल
सम्पादक : विरजानन्द दैवकरणि
व्यवस्थापक : ब्र० राहुल आर्य

ओ३म्

आप सादर आमन्त्रित हैं

वेदाध्ययन के पवित्र पर्व श्रावणी (रक्षाबन्धन) पर

10 अगस्त को भारी संख्या में पहुंचकर तीर्थस्थल गुरुकुल झज्जर में यज्ञ एवं सत्संग का पुण्य लाभ प्राप्त कीजिए।

सब सज्जनों को सूचित करते हुए प्रसन्नता है कि आपका प्रिय **रक्षाबंधन पर्व जो श्रावणी** के नाम से प्रसिद्ध है, **पूर्णिमा के दिन 10 अगस्त, 2014 रविवार को प्रातः 8 से 12 बजे** तक पूर्ण धार्मिक विधि से प्रतिवर्ष की भान्ति मनाया जारहा है। भारत में दूसरे देशों की अपेक्षा त्यौहार मनाने की ऋषि-मुनियों की बनाई विशेष परम्परायें हैं, जो इस लोक को भी सुधारती हैं और परलोक को भी। उनमें वेदाध्ययन से सम्बन्धित श्रावणी पर्व भी एक है।

इस अवसर पर ब्रह्मचारियों के यज्ञोपवीत संस्कार, वेदारम्भ संस्कार तथा संसार के उपकार का व्रत लेने वाले धर्मनिष्ठ जनों को वानप्रस्थ एवं संन्यास दीक्षा में दीक्षित किया जाएगा एवं पुराने यज्ञोपवीत बदलकर नए यज्ञोपवीत धारण करने आदि के कार्यक्रम होंगे।

इसीदिन रेवाड़ी रोड पर स्थित गुरुकुल की भूमि में बनने वाले स्वामी ओमानन्द सरस्वती पुरातत्त्व संग्रहालय के नवीन भवन का शिलान्यास हरियाणा के यशस्वी मुख्यमंत्री चौधरी भूपेन्द्रसिंह हुड्डा के करकमलों द्वारा प्रातः 10 बजे किया जाएगा।

अतः आप सभी आर्य धर्मनिष्ठजनों के अनुरोध है कि इस शुभ अवसर पर अधिक से अधिक संख्या में सपरिवार एवं इष्ट मित्रों सहित पधारकर पुण्य के भागी बनें एवं कार्यक्रम को सफल बनाएं।

दूर से आने वाले सज्जन 9 अगस्त को ही सायंकाल तक गुरुकुल झज्जर में पहुंचने की कृपा करें।

निवेदक

चौ० पूर्णसिंह देशवाल	राजवीरसिंह आर्य	विजयपाल योगार्थी	डॉ० योगानन्द शास्त्री
प्रधान	मन्त्री	आचार्य	कुलपति

फोन : 01262-253332, 9416055044

सुधारक के नियम व सविनय निवेदन

1. सुधारक का वार्षिक शुल्क 100 रुपये है तथा आजीवन सदस्यता शुल्क 1000 रुपये है।
2. यदि सुधारक 20 तारीख तक नहीं पहुंचता है तो आप व्यवस्थापक सुधारक के नाम से पत्र डालें। पत्र मिलते ही सुधारक पुन: भेज दिया जाएगा।
3. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा '**व्यवस्थापक सुधारक**' के नाम भेजें। सुधारक वी.पी. रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जाएगा।
4. लेख सम्पादक सुधारक के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त, सारगर्भित तथा मौलिक होने चाहिएं तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुन्दर लेख में कागज के एक ओर लिखे जाने चाहिएं। अशुद्ध एवं गन्दे लेखवाला लेख नहीं छापा जाएगा। लेखों को प्रकाशित करना न करना तथा उनमें संशोधन सम्पादक के अधीन होगा। अस्वीकृत लेख डाक-व्यय प्राप्त होने पर ही वापिस भेजे जाएंगे।
5. सुधारक में विज्ञापन भी दिए जाते हैं, परन्तु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जाएगा।
6. यह सुधारक मासिक पत्र समाजसुधार की दृष्टि से निकाला जाता है। इसमें आपको धर्म, यज्ञकर्म, समाजसुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, योगासन आदि विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।
7. सुधारक के दस ग्राहक बनानेवाले सज्जन को एक वर्ष तक नि:शुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा पचास ग्राहक बनानेवाले सज्जन को दो वर्ष नि:शुल्क सुधारक भेजा जाएगा तथा उसका फोटो सहित जीवन परिचय सुधारक में निकाला जाएगा।

–व्यवस्थापक

वर्ष :61 अंक : 12
अगस्त 2014 विक्रमाब्द 2071
दयानन्दाब्द 190 कलिसंवत् 5115
सृष्टिसंवत्-1,96,08,53,115

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ
1.	वेदोपदेश	2
2.	सम्पादकीय	3
3.	स्वाधीनता अर्थ कुर्सी पर.....	5
4.	हिन्दी विरोध की राजनीति.....	8
5.	कैंची की तरह काटना नहीं	12
6.	आबूधाबी से एक पत्र	14
7.	प्राचीन पाठशालों के खर्च	16
8.	देशविभाजन समय की दुर्घटना	18
9.	साहित्य की रचना का प्रकार....	20
10.	एक ऐतिहासिक पत्र	22
11.	समाचार प्रभाग	23

सुधारक मासिक पत्र का वार्षिक शुल्क १०० रुपये भेजकर स्वयं ग्राहक बनें और दूसरे साथियों को भी ग्राहक बनाकर सुधार कार्य में सहयोग दीजिये।

-व्यवस्थापक सुधारक

वेदोपदेश

१७. चैत्र

रारन्धि नो हृदि गावो न यवसेष्वा।

मर्य इव स्व ओक्ये।।

ऋ० १.९१.१३।।

विनय

हे देव! तुम मेरे हृदय में आ विराजो, इसी में रमण करो। कहने को तो पहले बहुत बार ऐसी प्रार्थना मैंने की है तथा औरों को करते सुना है। पर शायद तब मैं न तो अपने हृदय को जानता था और न तुम्हें जानता था। तुम तो मुझमें तभी विराज सकते जब कि मेरा हृदय स्वार्थ से बिल्कुल साफ हो- सर्वथा निर्मल हो। इसीलिये अब मैंने अपने जीवन के लिये भगीरथ-यत्न से हृदय को पवित्र किया है। मैंने झूठ, हिंसा, कुटिलता, असंयम आदि विकारों के मैल को ही नहीं निकाला है किन्तु बड़े यत्न से क्षण-क्षण आत्म-निरीक्षण करते हुवे राग और द्वेष के सूक्ष्मातिसूक्ष्म मल को भी खुरच-खुरच कर निकाला है और अतएव अब इसमें भक्तिस्रोत भी खुल गया है। इसीलिये मैं अब तुम्हें बुलाने की हिम्मत करता हूं। हे मेरे जीवनसागर! मैं कहता हूँ कि तुम मेरे हृदय में ऐसे आ जावो जैसे कि गौवें जौ के हरे खेत में प्रसन्नता से आकर खाने का आनन्द लेती हैं क्योंकि मैंने भी न केवल अपने हृदय को तुम्हारे योग्य स्वच्छ बनाया है किन्तु इस में यह भक्ति का रस भी जुटा रखा है। मेरे इस हार्दिक प्रेम का रसास्वादन करने के लिये तुम यहां आओ। मेरा प्रेम देखता है कि अब तुम ही मेरे प्राणों के प्राण हो, तुम्हारा स्पर्श मेरा जीना है और तुम्हारा हट जाना मेरी मौत है। इसलिए मेरा हृदय पुकारता है कि तुम मुझ में आकर सदा रमण करो। क्या मेरा सच्चा ज्ञानमय प्रेम तुम्हें यहां नहीं खींच लायगा? नहीं, मैं भूल करता हूं तुम मेरे हृदय में न केवल आओ किन्तु आकर इस तरह बस जाओ जैसे मनुष्य अपने घर में रहता है व रमण करता है। मेरी भक्ति आर्त्त, जिज्ञासु व अर्थार्थी की भक्ति नहीं है क्योंकि मैंने अपने हृदय से अब 'अहंकार' को भी सर्वथा निकाल दिया है। अब यह शरीर तेरा है, यह हृदय अब तेरा अपना घर है। "मैं" 'मम' सब यहां से लोप हो गया है। हे आत्मा की आत्मा सोम! सर्वथा विशुद्ध इस हृदय में अपना यथेच्छ रमण करो। यह तुम्हारा घर हो गया।

शब्दार्थ—

(**गावः न यवसेषु**) जैसे जौओं के बीच में गायें आकर रमण करती हैं, आनन्दित होती हैं और (**मर्यः स्व ओक्ये इव**) जैसे मनुष्य अपने निजी घर में बसता है वैसे ही (**त्वं**) तू (**नः हृदि**) हमारे हृदय में (**आ**) आकर (**रारन्धि**) सदा रमण करो व बस जाओ।

(—वैदिक विनय से)

सम्पादकीय....

स्वतन्त्रता प्राप्ति और उसकी सुरक्षा

विरजानन्द दैवकरणि

शारीरिक रूप से तो १५ अगस्त १९४७ को भारत अंग्रेजों की दासता से मुक्त होगया था, परन्तु भारतीय जनमानस अंग्रेजों की भाषा, संस्कृति, वेशभूषा और खानपान की दृष्टि से मानसिकरूप में अंग्रेजों का ही दास बना रहा। आज भारत को स्वतन्त्रता मिले ६७ वर्ष हो रहे हैं, परन्तु अंग्रेजियत की मानसिक दासता निरन्तर वृद्धि को प्राप्त हो रही है। आज का तथाकथित शिक्षितसमुदाय भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी में बात करना अपना अपमान समझता है। मातृभूमि भारत को अपना पुराना गौरव प्रदान करवाने के लिए हजारों युवक बलिवेदी पर चढ़ गये। माताएँ पुत्रों से विहीन होगईं, बहनें राखी हाथ में लिए बैठी रही, लाखों ललनाओं के माँग का सिन्दूर पुछ गया, हजारों वीरांगनाओं ने अपनी लाज बचाने के लिए अग्नि और कुंओं की शरण लेली, भरे-पूरे घरों को छोड़कर भिखमँगों की भांति लाखों व्यक्ति आश्रयहीन होकर दर-दर की ठोकरें खाने को विवश होगये। क्या यह सब इसलिए हुआ था कि जिन अत्याचारी अंग्रेजों के कारण भारतीयों को ये दुर्दिन देखने पड़े थे, उन्हीं के मानसिकदास बने रहें। भारत की स्वतन्त्रता के बाद भारत की जिस छवि की कल्पना तत्कालीन देशभक्तों ने की थी, परिणाम उससे सर्वथा विपरीत निकला। क्योंकि जिन लोगों ने अपना सर्वस्व लगाकर देश को परतन्त्रता की बेड़ियों से मुक्त कराया था, वे कुछ शहीद होगये, कुछ अपना कर्त्तव्य पूरा हुआ जानकर शान्त होकर बैठ गये, ऐसी अवस्था में ऐसे पदलोलुप व्यक्ति जिन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु कोई क्रियात्मक योगदान नहीं दिया, जिन्हें जेल में भी कोई कष्ट नहीं हुआ, जिनकी आस्था भारतीयसंस्कृति सभ्यता की ओर नहीं रही, ऐसे व्यक्ति स्वतन्त्रभारत की सत्ता पर प्रमुत्व स्थापित करके बैठ गये। विदेश में पढ़कर अंग्रेजों की सिखाई हुई भारत के प्रति जो मान्यता थी, उसी मानसिकता से भारतीय शासन को चलाने लगे। परिणामस्वरूप जातिवाद, गोत्रवाद, भाषावाद, प्रान्तवाद, धर्मवाद और भाई-भतीजावाद की जो परम्परा पराधीन भारत में थी, उससे कहीं अधिक रूप में यह परम्परा आज पूरे भारत में उग्ररूप धारण किये हुए है। आतंकवाद और धार्मिकपतन के रूप में भारत को पथभ्रष्ट और नष्ट करने का षड्यन्त्र पूरे उत्साह से सफलीभूत किया जा रहा है। दोषी को दण्ड नहीं मिलना, अथवा अत्यन्त विलम्ब से अत्यल्प दण्ड मिलना इसका विशेष कारण है। जिस राज्य में योग्य कार्यकर्ताओं को पुरस्कार तथा अपराधियों को दण्ड नहीं मिलता, वह राज्य पुरुषार्थियों, पराक्रमियों, गुणियों और सदाचारियों से रिक्त होकर अकर्मण्यों, प्रमादियों, मूर्खों और शैतानों का क्रीड़ास्थल बन जाता है। जिस देश में पद-प्रतिष्ठा, धन-जन और पाशविक शक्ति के मद से अपने से निर्बलों का शोषण किया जाता हो, अत्याचारियों को दण्ड न देकर पीड़ितों के आँसू न पोंछे जाते हों, जनता में सुरक्षा का विश्वास उठगया हो, उस देश में कभी शान्ति स्थापित नहीं, होसकती, जनता में असन्तोष और बेचैनी के भाव जागृत होने लगते हैं।

इस दुरवस्था से देश को बचाने हेतु केवलमात्र एक ही उपाय है और वह है प्राचीनभारत की सार्वभोमकल्याणमयी, पक्षपातरहित वैदिकशिक्षा। जब तक विश्व में यह शिक्षा प्रचलित रही तब तक सारा संसार परस्पर प्रेमपूर्ण वातावरण में रहकर शान्ति से जीवनयापन करता रहा। जब से उस शिक्षा का लोप हुआ है तब से परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, परराष्ट्र को बलात् दबाना, चोरी-जारी, हिंसा, क्रूरता, अभिमान और चरित्रहीनता आदि का वातावरण बढ़ता जा रहा है। जब तक ऐसे दुर्गुण हम लोगों में रहेंगे, हम वास्तविकरूप से स्वतन्त्र नहीं कहला सकते। स्वतन्त्रता का अर्थ अच्छृंखलता नहीं होता।

कल्याणकारी और सत्कर्म करने में जब किसी के अनधिकारपूर्वक चेष्टा के अधीन न रहना हो वह स्वतन्त्र कहाता है। पाणिनिमुनि के शब्दों में "स्वतन्त्रः कर्ता" स्वतन्त्र वह होता है जो अपने कार्य में किसी के अधीन न हो।

भारत लगभग सातसौ वर्ष तक मुस्लिम शासकों के अधीन रहा, उन्होंने भी भारतीयों पर लोमहर्षक अत्याचार किये, बलात् मुसलमान बनाये गये, मन्दिर और मूर्तियां नष्ट की, साहित्य जलाया गया परन्तु पुनरपि भारत की आत्मा नष्ट नहीं हुई। इसके विपरीत अंग्रेजों ने छुट-पुट स्थानों पर तथा भारत पर लगभग दो सौ वर्ष शासन किया, इतनी-सी अल्पावधि में ही शिक्षा में परिवर्तन करके भारत की अस्मिता को समाप्त कर दिया। अत्याचार करने में अंग्रेजों ने अपनी ओर से कोई कसर नहीं छोड़ी, स्वयं तो इन्होंने लाखों निर्दोष लोगों को मौत के घाट उतारा ही, परन्तु जाते-जाते भी हिन्दू-मुसलमानों में वैमनस्यता के बीज बोकर, फूट डालकर दस लाख लोगों की हत्या करवाने में भी संकोच नहीं किया।

छल-कपट और धूर्तता करना अंग्रेजों का प्रायशः मूलभूत स्वभाव है। भारत के देशी राजाओं और मुस्लिम बादशाहों का राज्य हथियाने, हड़पने में छलकपट और झूठ का निस्संकोच प्रयोग किया गया। जिसका राज्य हड़पना होता उसी के राज्य में वहीं के लोगों को लोभ देकर राज्य में अशान्ति फैलाना, उपद्रव कराना आदि हथकंडे करके राजा को कहना कि तुम्हारे राज्य में ऐसे-ऐसे विपरीत कर्म हो रहे हैं, अतः इसमें सुधार करने के लिए कम्पनी को आपका शासन अपने अधिकार में लेना पड़ेगा। किसी शासक के पुत्र नहीं होता उसे गोद लेनें का अधिकार न देकर उसके राज्य को कम्पनी राज्य में मिलाने का बहाना बना लिया जाता। ऐसे समय में भी झांसी की रानी लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगनाओं ने अंग्रेजों की दासता स्वीकार नहीं की। पुनरपि धूर्तता करते-करते एक-एक करके सारे भारत को अंग्रेजों ने अपने चंगुल में फंसा लिया। इसमें अंग्रेजों की कूटनीति तो कारण थी ही, परन्तु भारत के प्रान्तीयशासकों में भी देश की एकता के लिए सोचने की शक्ति नहीं थी। वे केवल अपने राज्य तक सीमित थे। वहां भी जनता की उन्नति की ओर उनका ध्यान न होकर प्रायशः अपने ही सुख, भोग, विलास और ऐश्वर्ययुक्त जीवन जीने तक सीमित रहते थे। एक परिवार के ऐश-आराम, सुख-सुविधा हेतु पूरे राज्य का प्रयोग किया जाता था। अपने परिवार की सुरक्षा हेतु ही युद्ध में हजारों वीरों की बलि चढ़ादी जाती थी। इस विषय में राजपूतशासक और मुस्लिमशासक दोनों समाननीति का प्रयोग करते थे। चाहे जो भी किया जाये अपने सुख-आराम में विघ्न न पड़ने पाये। इस नीति से जनता में भी विद्रोह की भावना उत्पन्न होने लग गई थी, और वह भी इन अत्याचारों से मुक्त होने के लिए प्रयत्नशील थी। ऐसे समय में ही महर्षि दयानन्द सरस्वती ने प्राचीनशिक्षा के महत्त्व को दर्शाकर जनता में अपने प्राचीन गौरव के प्रति जागरूकता उत्पन्न की और दासता से मुक्त होने का गुप्तरूप से क्रियात्मक प्रयास प्रारम्भ होगया। श्रीश्यामजी कृष्ण वर्मा और वीर सावरकर जैसे अगणित वीरों ने इंगलैण्ड आदि में रहकर भारत में सशस्त्र क्रान्ति को जन्म दिया। परिणामतः पं० रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्रशेखर आजाद, सुभाषचन्द्र बोस, सरदार भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव, अशफाक उल्ला खाँ और खुदीराम बोस जैसे सैकड़ों क्रान्तिकारियों ने अपने जीवन आहुत कर दिये, इसीलिये भारत शारीरिकरूप से पराधीनता से मुक्त हुआ।

अब आवश्यकता है कि भारतीय प्राचीन-संस्कृति, सभ्यता, आचार-विचार और शिक्षा-दीक्षा को क्रियात्मकरूप से प्रचलित करने की। तभी भारत अपने प्राचीन गौरव को पुनः प्राप्त कर सकेगा। आशा है भारत के वर्तमान राजनेता इस भारत को पुनः गौरव प्रदान कराने की चेष्टा करते रहेंगे।

-विरजानन्द दैवकरणि

स्वाधीनता का अर्थ कुर्सी पर बैठनेवालों की आकृति बदल जाना नहीं

✍प्रकाशवीर शास्त्री, सन्-१९५५

खण्डित भारत स्वाधीन होगया, परन्तु ईसाइयत और इस्लाम की वह काली छाया जिसने भारतीय जीवन को विशृंखल-सा कर रक्खा था, अभी ज्यों की त्यों यहां विद्यमान है। स्वाधीनता शब्द के अर्थ कुर्सी बदल जाना अथवा कुर्सी पर बैठनेवाली आकृतियों का बदल जाना ही तो नहीं है। जब तक शासक और शासकीय प्रकारों पर स्व अर्थात् अपनी पुनीत भारतीय संस्कृति की छत्रछाया स्पष्ट दृष्टिगोचर न हो, तब तक उस आधीनता में वह स्व की हो या पर की, राष्ट्र को कोई विशेष अन्तर प्रतीत नहीं होता।

अंग्रेज ने अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि के प्रबलतम सैनिक-आन्दोलनों से प्रभावित होकर सन् १९४७ में भारत छोड़ तो दिया, पर जर्मनी, कोरिया, फिलस्तीन, मिश्र और सूडान की विदेशी सत्ताओं की तरह से दो टुकड़ों में विभक्तकर पाकिस्तान एवं भारत नाम से दो राष्ट्र बनाकर छोड़ा।

परिणाम उसका जो होना था, वह ही हुआ, जहां भारत में से पाकिस्तान नाम का राष्ट्र पृथक् बनाकर सदा के लिए एक शत्रुदेश हमारी छाती पर खड़ा कर दिया, वहां ठण्डे पड़ते जा रहे मुस्लिम हौसलों पर भी विभाजन की संजीवनी छिड़ककर उन्हें फिर कमर सीधी करने का मौका दे दिया। दूसरे फिर उसकी सहायता और सहयोग के बहाने अपना पंजा भी वहीं मजबूती से जमा लिया।

आज पाकिस्तान में बैठकर जहां अंग्रेज फिर कभी भारत में शासन करने के सुख स्वप्न ले रहा है, वहां घर के अन्दर यहां बैठा हुआ उसका भाई ईसाई पादरी उसके लिए क्षेत्र तैय्यार करने की योजनायें कार्यान्वित करता जा रहा है। यद्यपि यह तो अब दो और दो चारवाली सच्चाई है, जिनके राज्य में कभी सूर्य नहीं छिपता था, इतने बड़े साम्राज्य के अधिपति अंग्रेज जो विश्व में कभी पहले नम्बर की शक्ति माने जाते थे, द्वितीय महायुद्ध में आज जब तीसरे नम्बर की शक्ति होगए। भारत, लंका और बर्मा जैसी सोने की खानों से हाथ धो बैठे और रही-सही सत्तायें दक्षिण अफ्रीका, ब्रिटिश गायना आदि भी जिनके हाथों से खिसकते जा रहे हैं, उनके द्वारा पल्लवित ईसाई आन्दोलन दम तोड़ते समय आखिर कब तक अंगड़ाइयां लेगा? अच्छा तो यह ही था- इन विषाक्त कीटाणुओं का पार्सल भी जाते समय उनके साथ ही हम कर देते, पर सेक्युलरवाद (धर्मनिरपेक्षता) के आदर्शवादी दूरवीक्षणयन्त्र ने आरम्भ से ही अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति पर अधिक ध्यान रखा है। घर में सुलगती जा रही इस आग को गम्भीरता से नहीं देखा। लेकिन अब आसाम की पहाड़ियों में उठते हुए स्वतन्त्र नागाप्रदेश की मांगों, बिहार और मध्यप्रदेश की सीमा पर सरगुजा के आस-पास चलरहे झारखण्ड आन्दोलनों, ट्रावनकोर-कोचीन के ईसाइयों की गोवा से लेकर बम्बई तक ईसास्तान बनाने की योजनाओं तथा अन्य पहाड़ी और कथित आदिवासी क्षेत्रों में राष्ट्रवादी षड्यन्त्रों एवं काश्मीर आदि भारतीय सीमा के प्रदेशों में ईसाई पादरियों की राष्ट्रघातक प्रवृत्तियों का जब से पता लगा है, भारत सरकार चिन्तित हो उठी है। सुबह का भूला शाम को भी घर आजाय तो उसे भूला नहीं मानते हैं, पर अच्छा हो जो वह भूल फिर से न दोहराई जाए।

अंग्रेज जब भारत से जाने लगा, तब उनका हाथ जिनकी पीठों पर था, उन पादरियों में भी खलबली मचनी स्वाभाविक थी। उन्होंने भी अपने बिस्तर संभाले और बड़े-बड़े मिशन स्थानों के भवन

बेचने लगे। सूरत और बम्बई के आस-पास उनके साठ बड़े-बड़े भवन नीलाम हो गये, जिनकी किसी की भी बोली एक लाख रुपये से कम न थी। धड़ाधड़ नीलाम होती जा रही ईसाई मिशनों की इमारतों के समय कुछ पादरी यह बोले- अरे भाई! भारत को पहले स्वतन्त्र तो पूरी तरह हो लेने दो, घोषणा मात्र से ही क्यों हिम्मत हार रहे हो? बात कुछ समझ में आई और वह रुक गये। भारत स्वाधीन हुआ और उसने अपनी नीति धर्मनिरपेक्षता की रखी। फिर क्या था। अब तो बंधे बंधाये बिस्तर फिर खुल गये और पहले रखी और पहले से भी बढ़ चढ़कर उन्होंने ईसाइयत के प्रचार पर बल लगाना आरम्भ कर दिया। पहले सन् १९४७ तक के विभाजित भारत में जहां विदेशी मिशनरियों की संख्या २२७१ थी, वहां बढ़ते-बढ़ते अब खण्डित भारत में ४६८३ होगई और सैकड़ों की संख्या में भोले भारतीय प्रतिदिन ईसाई बनाये जाने लगे। स्वयं वर्तमान गृहमंत्री डॉ० कैलाशनाथ काटजू ने भी लोकसभा में ईसाई प्रचारकों की इस बढ़ती हुई संख्या पर गम्भीर चिन्ता व्यक्त करते हुए एक राजनैतिक तथा राष्ट्रीय समस्या बताया था। माननीय राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद ने स्वयं आसाम में ईसाई प्रचारकों को सम्बोधित कर कहा था- भारत के संविधान में धर्मप्रचार की स्वतन्त्रता उन्हें दी गई है, धर्म परिवर्तन करने की नहीं। प्रधानमंत्री पंडित नेहरू भी भारतीय सीमाओं पर चल रही इनकी चेष्टाओं को भयानक कह चुके हैं। कई पादरी स्पष्ट पंचमांगी कार्य करते हुए यहां से निकाले भी जा चुके हैं। पर क्या इतने मात्र से ही वह अपनी हरकतों से बाज आगए हैं!

अंग्रेज के समय जो ईसाइयत सरकारी सर्वियों के लोभ से और तरह-तरह के आकर्षक उपायों से बढ़ रही थी, अब फिर वह कंचन और कामिनी के चक्रों में फांस कर बढ़ाई जा रही है। अभी पीछे सर थॉमस की शताब्दी सारे भारत में मनाई गई, उसमें पं० नेहरू का उदाहरण देकर सूरत की सभा में वहां के सबसे बड़े पादरी ने कहा-अब तो पंडित जी भी स्वीकार करते हैं कि ईसाइयत को भारत से हटाया नहीं जा सकता। लखनऊ में अभी गत अगस्त १९५४ में ही जो ईसाई पादरियों की एक बहुत बड़ी सभा हुई है, उसमें भी उन्होंने यह निश्चय किया है- किसी का मुँह ताकना हम बंद करें और अपने पैरों पर खड़े होकर प्रभु ईसा के सन्देश को फैलायें।

ट्रावनकोर-कोचीन में पहले हिन्दुओं के कुछ मन्दिर ही गिराए थे। बाद में श्रीशंकराचार्य की जन्मभूमि वाले गाँव में शंकर वेदान्तविद्यालय की स्थापना का खुलकर इसलिये विरोध किया, क्योंकि वह सारा गाँव ईसाई होगया है। इसी ट्रावनकोर कोचीन के निर्वाचनों में पीछे ईसाई पादरियों ने खुलकर यह फ़तवे दिये कि हर ईसाई कांग्रेस को वोट दे। मतलब क्या था? जिससे यह या केन्द्र में बैठी इनकी सरकार हमारे विपरीत कुछ अधिक ने कहे। एक ओर तो ट्रावनकोर में कांग्रेस को मत (वोट) दो कहकर उनकी आत्मीयता प्राप्त करने को इच्छुक हैं दूसरी ओर भारत के हरिजन कहे जानेवाले व्यक्तियों में उनकी दु:खदर्द की बातों को सहानुभूतिभरे वातावरण में सुनकर यह भी भावना पैदा कर रहे हैं- इस सरकार से तो अंग्रेजी सरकार ही अच्छी थी। इस प्रकार राजनीति में खुलकर टांग अड़ाते हुए अब वह लोग हिचकते नहीं हैं।

आरम्भ में अंग्रेजी सरकार के समय स्कूल-अस्पताल-छात्रावास आदि खोलकर इन्होंने भोले भारतीयों में प्रवेश किया। विशेषकर उन क्षेत्रों और वर्गों में जो घने जंगलों अथवा पहाड़ों में बसे हुए थे या फिर जिन्हें हिन्दूसमाज ने दलित या अछूत कहकर घृणा का पात्र बनाया हुआ था। इसमें तो कोई सन्देह है ही नहीं, शरीर के भिन्न-भिन्न भागों में जब दुर्बलता अधिक मात्रा में पैदा हो जाती है, तब वह स्वयं ही रोग को आमंत्रण देकर बुलाती है, ठीक इसी प्रकार हिन्दुओं का रूढिवादीरूप भी इस प्रकार की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देने में सहायक हुआ।

हर्ष सूचना

दिनाँक २२ जुलाई, २०१४ को चण्डीगढ़ स्थित हरियाणा निवास में पुरातत्त्व संग्रहालय गुरुकुल झज्जर के निदेशक और सामगान जैसे दुर्लभ ग्रन्थों के सम्पादक श्री विरजानन्द दैवकरणि को श्रीमती गीता भुक्कल, शिक्षामन्त्री हरियाणा के करकमलों द्वारा कविबाणभट्ट सम्मान (सन् २०१३) से सम्मानित किया गया। इस सम्मान समारोह में श्री विरजानन्द को इक्यावन हजार रुपये, प्रशस्तिपत्र और शॉल भेंट किया गया। यह कार्यक्रम चौधरी भूपेन्द्रसिंह हुड्डा के परामर्श से हरियाणा संस्कृत अकादमी के निदेशक डॉ० सुधीर शर्मा द्वारा आयोजित किया गया था। विद्वानों और लेखकों को उत्साहित और सम्मानित करने की इस गौरवमयी परम्परा को चालू करने के लिए हरियाणा सरकार और हरियाणा संस्कृत अकादमी धन्यवाद के पात्र हैं। इस कार्यक्रम में संस्कृत के १२ साहित्यकारों को सम्मानित किया गया।

–निवेदक

डॉ० रणवीर शास्त्री

पुरातत्त्व एवं संग्रहालय विभाग हरियाणा सरकार, चण्डीगढ़

सार्वजनिक निमन्त्रण

सभी सज्जनों को सहर्ष सूचित किया जाता है कि १० अगस्त २०१४ रविवार को श्रावणी के पावन दिवस पर १० बजे माननीय चौधरी भूपेन्द्र सिंह हुड्डा मुख्यमन्त्री हरियाणा सरकार गुरुकुल झज्जर की रेवाड़ी रोड पर स्थित भूमि पर 'स्वामी ओमानन्द सरस्वती पुरातत्त्व संग्रहालय' के नवीन भवन का शिलान्यास करेंगे।

अतः आप सभी से सविनय निवेदन है कि इस शुभ अवसर पर अधिक से अधिक संख्या में पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढायें।

–: निवेदक :–

प्रधान	मन्त्री	आचार्य	कुलपति
चौ० पूर्णसिंह	**राजबीरसिंह आर्य**	**विजयपाल योगार्थी**	**डॉ० योगानन्द शास्त्री**

हिन्दी–विरोध की राजनीति राष्ट्रहित में नहीं

–महावीर 'धीर' 21/1227, प्रेमनगर, रोहतक मो. 9466565162

जब–जब हिन्दी विकास की बात उठती है तब तब तमिलनाडू द्वारा उसका विरोध किया जाता है। म०ज० रामचन्द्रन को मरणोपरान्त ''भारत रत्न'' दिया गया तो ''अन्ना द्रुमक'' ने यह कहकर उसे लेने से इन्कार कर दिया कि इस पर देवनागरी लिपि में लिखा हुआ है। यह आम लोगों को राष्ट्रीयता से भटकाने और सस्ती लोकप्रियता हासिल कर सत्ता हथियाने का कुत्सित खेल है। इनसे कोई पूछे क्या तमिलनाडू के लोग हिन्दी या संस्कृत नहीं पढ़ते हैं ? प्रदेश के छात्र खूब हिन्दी व संस्कृत पढ़ते हैं। कितने राजनेता हैं जो बखूबी हिन्दी जानते हैं लेकिन जान बूझकर हिन्दी प्रयोग नहीं करते क्योंकि हिन्दी बोलने पर उनका यह राजनैतिक शस्त्र कुन्द हो सकता है। ऐसे कितने ही उदाहरण दिए जा सकते हैं कि जब स्वार्थसिद्धि की बात सामने हो तो तमिलनाडू के लोग खूब हिन्दी बोलते हैं। तमिलनाडू में हिन्दी संगोष्ठी में गए कांग्रेस सांसद ''बाल कवि वैरागी'' को तमिलभाषी चालक प्रतिदिन संगोष्ठी स्थल से उनके आवास तक लाता ले जाता था। वह टूटी फूटी अंग्रेजी व तमिल में ही सांसद महोदय से कोई बात होने पर उत्तर देता था तथा कहता था– ''आई डोन्ट नो हिन्दी'' लेकिन जब किसी दिन सांसद जी के एक परिचित ने सांसद जी से हिन्दी में निवेदन किया कि–सर मेरे अधिकारी मेरी पदोन्नति बिना किसी कारण के रोके हुए हैं आप कृपा करके मेरी पदोन्नति के लिए उनको कहेंगे तो मेरी पदोन्नति अवश्य ही उन्हें करनी पड़ेगी। यह बात सुनते ही चालक तुरन्त सांसद महोदय से हिन्दी में बोला–सर मैं इतने दिन से आपकी सेवा कर रहा हूं मुझे कई साल की सेवा होने पर भी पक्का नहीं किया जा रहा है। आप कृपा करके मेरा भी काम करा दें। सांसद जी ने हिन्दी बोलते देखकर उससे कहा–अरे, तू तो कहता था मुझे हिन्दी नहीं आती। अब अपना काम निकालने के लिए कैसे हिन्दी आ गई तुझे। झेंपते हुए चालक बोला–सर गलती हो गई। थोड़ी थोड़ी तो बोल लेता हूं लेकिन पूरी बात नहीं बोल सकता। इसलिए आपसे शरमाकर कह दिया था। एक बार प्रो० ओमप्रभात ट्रेन में यात्रा कर रहे थे एक तमिल परिवार उनके पास ही बैठा था। यह परिवार हिन्दी बोलने पर उत्तर नहीं दे रहा था लेकिन काफी देर इंग्लिश में बात करते करते किसी धार्मिक मुद्दे पर बात होने लगी तो अचानक उनमें से एक लगभग 25–30 वर्ष का युवा हिन्दी बोलने लग गया।

इस प्रकार यह देखने में आया है कि तमिलनाडू में हिन्दी विरोध का मुद्दा जीवित रखने के लिए राजनेताओं ने सिर धड़ की बाजी लगा रखी है। लोगों में यह भावना कूट कूट कर भरी गई है कि भले ही अपनी जरूरत के लिये हिन्दी पढ़ो लेकिन जहां तक सम्भव हो यह प्रकट मत होने दो कि हमें हिन्दी आती है। हिन्दी का विरोध हर हाल में करो। यदि हिन्दी लागू हो गई तो हम पिछड़ जाएंगे।

पं० जवाहरलाल नेहरू ने जगाया हिन्दी विरोध

अनेक समस्याओं की तरह हिन्दी विरोध के मुद्दे को पनपने का मौका भी पं० जवाहरलाल नेहरू ने ही देश को दिया। जब 1959 में उन्होंने संसद में कहा कि ''हिन्दी किसी पर थोपी नहीं जाएगी'' तो तमिलनाडू के लोगों को अहसास हुआ कि हमारे ऊपर हिन्दी थोपने का उपक्रम चल रहा है अब हम इसे सफल नहीं होने देंगे। आजादी से पूर्व तथा आजादी के तुरन्त पश्चात् हिन्दी का दूर दूर तक कहीं भी विरोध नहीं था। हां इतनी बात की

बहस जरूर थी कि संस्कृतनिष्ठ हिन्दी चले, तो कुछ सांसद कहते थे कि आम बोलचाल की भाषा चले, जिसे गांधी जी ''हिन्दुस्तानी' कहते थे। कुछ विवेकशील सांसदों ने जो कि पूरी सांसद के 50 प्रतिशत थे, उन्होंने कहा था कि-भारतीय भाषाओं में एकरूपता लाने, उन्हें पुष्ट करने तथा भारतीय धर्म, दर्शन व विज्ञान को विकसित करने के लिए, सबके लिए सहज व समान भाषा संस्कृत को ही देश की राष्ट्रभाषा के पद पर सुशोभित करना चाहिए यह हम भारतीयों के लिये गौरव की बात होगी लेकिन श्री नेहरू ने ''15 वर्ष तक अंग्रेजी सह राजभाषा रखी जाए'' यह बात कहकर ऐसी लंगड़ी मारी की हिन्दी संस्कृत सहित सारी भारतीय भाषाएँ चारों खाने चित्त हो गई। यह भारत की भाषाओं ही नहीं अपितु भारत राष्ट्र की पीठ में छुरा घोंपा गया था। जो देश नया नया स्वतंत्र हुआ था उसे भाषायी और सांस्कृतिक गुलामी की ओर मोड़ दिया गया। उसी का परिणाम है कि आज शिशुशाला से लेकर शिक्षा के अन्तिम चरण तक अंग्रेजी व अंग्रेजीयत हावी है। संस्थाओं व कार्यालयों में टाई परिधान का अनिवार्य भाग है जबकि इंग्लैंड, अमेरिका, जापान आदि देशों में टाई को हानिप्रद मानकर इस पर रोक लगाई गई है। इस शिक्षा ने देश में ऐसा वातावरण पैदा कर दिया है कि आज का भारतीय नागरिक अपनी भाषा व संस्कृति को अत्यन्त हीन समझकर देश को पददलित करने वाले मालिकों का अन्धानुकरण कर रहा है। जिसके कारण से विदेशी कम्पनियां हमें अनेक प्रकार से लूट रही हैं। श्रीमती इंदिरा गांधी के समय हिन्दी शब्दकोष तैयार हुए पुस्तकें लिखी गई सभी संस्थाओं में हिन्दी इंगलिश शब्दसूचियों के चार्ट भेजे गए लेकिन उच्च स्तर पर अंग्रेजी जारी रहने के कारण प्रयास सफल नहीं हुआ।

स्वतंत्रता पूर्व का तमिलनाडू

तमिलनाडू के पहले मख्यमंत्री जो भारत के पहले गवर्नर जनरल भी रह चुके थे उन श्री सी. गोपालचारी ने ''दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा'' स्थापित की थी तथा स्पष्ट कहा था कि-हिन्दी के अतिरिक्त अन्य कोई भी भाषा भारत की राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती अत: सबको हिन्दी राष्ट्रीय कर्तव्य के रूप में श्रद्धा से सीखनी चाहिए। आज के तमिलनाडू के राजनेता अपने पूर्वजों के मार्ग से भटककर राष्ट्रद्रोह के पथ पर चलने की कोशिश कर रहे हैं। वे तमिलनाडू के महान् हिन्दी कवि ''सुब्रह्मण्यम भारती'' को भी भूल रहे हैं जिन्होंने हिन्दी के माध्यम से साहित्य रचकर भारत राष्ट्र की सेवा की थी। 1265 ई० में ''अलाऊद्दीन खिलजी'' ने देवगिरी तक फैले अपने शासन में हिन्दी में ही कामकाज किया था। 1327 ई० में ''मुहम्मद तुगलक'' ने देवगिरी को ही दिल्ली के बजाय अपनी राजधानी बनाया था। तब पूरे दक्षिण में हिन्दी में ही काम चलता था। साहित्य व राजकाज की भाषा हिन्दी थी। मुसलमान लेखक हिन्दी में लिखते थे। जिसे ''दक्षिणी हिन्दी'' कहा जाता था। आज भी तमिलनाडू के व्यक्ति ने ही रुपये का प्रतीक ` देवनागरी लिपि में ही बनाया है।

वेदों की रक्षा दाक्षिणत्य परिवारों ने ही की। आज भी वेदपाठ में कोई संदेह होने पर दक्षिण के वेदपाठियों को ही प्रमाण माना जाता है। वेदों के ज्ञान के उद्धार के लिए चिन्तित रहने वाले कुमारिल भट्ट, वेद उद्धारक प्रथम शंकराचार्य, रामनुजाचार्य, आनन्दतीर्थ, वल्लभाचार्य, निम्बार्क आदि धर्मगुरु दक्षिण की ही देन हैं। आज भी तमिलनाडू में संस्कृत बड़ी श्रद्धा से पढ़ी जाती है। संस्कृत जाने बिना तमिल सहित किसी भी एशिया की भाषा का कोई विद्वान् नहीं बन सकता। हिन्दी संस्कृत की वर्णमाला व लिपि समान हैं। पूरे भारत में भी संस्कृत सभी प्रदेशों में पढ़ी जाती है जिसके कारण से हिन्दी पढ़ने और बोलने और समझने में कोई कठिनाई नहीं है। तमिलनाडू के सभी लोगों के गांव व नगरों

के नाम शुद्ध संस्कृत व हिन्दी में ही हैं। वहां की एक पार्टी का नाम **प्रजाराज्यम पार्टी** है। करुणानिधि, जयललिता, सुब्रह्मण्यम आदि नाम शुद्ध संस्कृत व हिन्दी के ही हैं तो क्या इन्हें समुद्र में डूब जाना चाहिए या अपने नाम बदल लेने चाहिएं ??? क्या संस्कृत देवनागरी लिपि में है तो तमिलनाडू के भाइयों को संस्कृत नहीं पढ़नी चाहिए ? वे तो खूब संस्कृत पढ़ रहे हैं। कितनी ही राष्ट्रीय संगोष्ठियों में तमिलनाडू के विद्वान् धाराप्रवाह शुद्ध हिन्दी बोलते हैं जो उत्तर भारतीयों से कहीं अधिक शुद्ध होती है। अत: यह स्वत: सिद्ध है कि तमिलनाडू में हिन्दी का विरोध नहीं है यह केवल एक राजनैतिक दाव है जिसके फन्दे में कुछ लोग अवश्य फंस जाते हैं। लेकिन राष्ट्रभाषा से द्रोह राष्ट्रद्रोह है। राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत, राष्ट्रभाषा का अनादर सीधे राष्ट्रद्रोह है। करुणानिधि की बजाय जयललिता के दिल में हिन्दी विरोध के भाव नहीं हैं लेकिन मजबूरीवश यह मुद्दा उठने पर वोट कटने के भय से उसे भी मुद्दे का समर्थन करना पड़ता है। केरल, कर्नाटक, आन्ध्र, तेलंगाना में हिन्दी का कोई विरोध नहीं है। पूर्वोत्तर के राज्यों में हिन्दी विरोध नहीं है। अरुणाचल प्रदेश के सांसद व केन्द्रीय गृह राज्यमंत्री किरेन रिजजु ने हिन्दी में शपथ ली तथा वे प्राय: हिन्दी में ही बोलते हैं। जम्मू कश्मीर के सब लोग हिन्दी बोलते हैं। भले ही वे उसे उर्दू का नाम दिए हुए हैं। मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला प्राय: हिन्दी बोलते हैं लेकिन घटिया राजनीति के कारण उन्होंने हिन्दी का विरोध पिछले दिनों में किया। अब्दुल्ला परिवार ने हमेशा देश विरोधी कार्य किए हैं। जिस अदूरदर्शी व कुत्सित सोच के कारण महाराजा हरिसिंह की जगह शेख अब्दुल्ला को कश्मीर का शासन सौंपा गया वह इतिहास के पन्नों में छिपा हुआ है जिसकी चर्चा यहां करना उचित नहीं है। देश की जनता सब कुछ जानती है लेकिन शासन से स्वार्थ साधने में उसे विवश, गूंगा और अनजान बनने को विवश होना पड़ता है। हमें यह कहने में असत्य नहीं लगता कि अंग्रेजों द्वारा स्थापित कांग्रेस ने कुछ प्रसंगों को छोड़कर भारत और भारतीयता के विरोधियों को ही प्रश्रय दिया है। इसलिए देश की छोटी छोटी समस्याएं बड़ी बनती गई तथा नई नई समस्याएं पैदा भी होती गई। अब कांग्रेसी सोच से दूसरी सोच वाली पार्टी का बहुमत केन्द्र में आया है। देश प्रतीक्षा में है कि शायद देश की सभी समस्याएं सुलझेंगी।

अन्य देशों के उदाहरण

रूस, चीन जैसे बड़े देश तथा जापान, इजरायल, जर्मन, इंग्लैंड, फ्रांस जैसे छोटे देशों ने पूरे देश के लिए एक भाषा मान्य की तथा उससे विकास का उदाहरण सबके सामने है। अनेक देशों ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को भी अपने देश की भाषा में काम करने को विवश किया है। विदेशी भाषा में सब लोग प्रवीण नहीं हो सकते। जो लोग विदेशी भाषा में प्रवीण होते हैं वे बखूबी पूरे देश का संसार से ज्ञान विज्ञान का व अन्य संपर्क साध सकते हैं। ये लोग एक प्रतिशत के आसपास ही बहुत होते हैं। सब पर विदेशी भाषा थोपने से पूरा देश पिछड़ता है। समय पैसा का अपव्यय होता है। ट्यूशन कौचिंग संस्कृति पनपती है। शिक्षा दुरूह बन जाती है। देश की स्वाभाविक सरल संस्कृति कुन्द हो जाती है। जितना उत्तर भारतीय अंग्रेजी में पिछड़ता है उतना ही कमोबेश दक्षिण भारतीय पिछड़ता है लेकिन तमिलनाडू के नेता अंग्रेजी का विरोध कभी नहीं करते। अंग्रेजी अनिवार्यता ही है जो हमारी भाषाओं को आपस में लड़ा रही है तथा स्वयं सिंहासन पर विराजमान है यह हमें क्यों नहीं दिखाई पड़ता ? अंग्रेजी जानना विदेश संपर्क में सहायक है विदेश से पहले देश जरूरी यह समझना प्रत्येक नागरिक के लिए जरूरी है। यदि हम अंग्रेजी को देश की संपर्क भाषा रखेंगे तो विश्व की अनूठी भारतीय भाषाओं को स्वयं ही नष्ट कर देंगे। यह अपने पैरों में स्वयं कुल्हाड़ा मारना होगा।

हिन्दी प्रान्त ही हिन्दी दुर्दशा के लिए उत्तरदायी

यदि हिन्दी प्रान्त अपने अपने प्रदेश में शत प्रतिशत कार्य हिन्दी में करते तो आज हिन्दी विश्वभाषा बन गई होती। हिन्दी में प्रत्यके विषय की पुस्तकों का लेखन हो चुका है लेकिन पुस्तकें पुस्तकालयों में दीमक की भेंट चढ़ रही हैं और संस्थाओं और कार्यालयों में कार्य अंग्रेजी में घसीटे जा रहे हैं। हिन्दी प्रान्तों में वहीं पर प्राय: हिन्दी का प्रयोग होता है जहां पर अंग्रेजी चल नहीं पाती। हरियाणा प्रान्त जो हिन्दी प्रान्तों के लगभग मध्य में है यहां सभी स्कूलों में शिशुशाला से स्नातक स्तर तक अंग्रेजी थोपी गई है। जहां कभी सरस्वती नदी के किनारे ऋषियों ने वैदिक ऋचाओं का गान किया था। जहां महाभारत नाम के विश्व युद्ध में भी श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश संस्कृत भाषा में दिया था। जहां ऋषिगण सोमलता रस पान करके मन, बुद्धि व शरीर को स्वस्थ रखते थे वहां पर घर घर में सुरापान करके चौबीसों घंटे मानवता का अट्टहास हो रहा है। हिन्दी जन-जन की भाषा होने के कारण स्वत: ही बढ रही है। हिन्दी प्रान्तों का क्षेत्र विस्तृत है अत: अन्य प्रान्तों को अनेक मामलों में हिन्दी प्रान्तों से वास्ता पड़ता रहता है जिससे सभी प्रान्तों में हिन्दी समझी जाती है। हिन्दी प्रान्तों के साथ लगते प्रान्त तो हिन्दी बखूबी समझते हैं तथा हिन्दी प्रान्त भी उनकी भाषा समझते हैं। पूरा देश ही नहीं पाकिस्तान, अफगानिस्तान, तिब्बत, नेपाल, बंगला देश, म्यांमार, थाईलैंड, वियतनाम, इंडोनेशिया, कम्बोडिया आदि देशों में भी हिन्दी बोली व समझी जाती है। फिजी, गियाना, त्रिनिडाड, मालद्वीप, मौरीशस आदि देशों में हिन्दी मान्य भाषा है और वहां की बोली है, यह तब है जब हिन्दी के लिये कोई सरकार कुछ नहीं कर रही है। कम से कम हिन्दी प्रान्त तो केन्द्र को मजबूर कर सकते हैं कि- हमारे छात्रों को उच्च से उच्च स्तर पर हिन्दी माध्यम का विकल्प चाहिए। हमारे उच्च न्यायालयों व सर्वोच्च न्यायालय में हिन्दी का विकल्प चाहिए। इसके लिए आंदोलन चलते रहते हैं लेकिन हिन्दी प्रान्त ही हिन्दी विकास की मांगों की अनदेखी कर रहे हैं। यह विश्व का एक आश्चर्य है??? धिक्कार है हिन्दी प्रान्तों को जो लार्ड मैकाले के सपने पूरे करने के लिए राष्ट्रभाषा का गला दबाए हुए हैं!!! शहीदों के बलिदान भुला दिए गए हैं।

समाधान क्या है?

केन्द्र सरकार को तुरन्त यह विधेयक संसद में पारित करना चाहिए कि केन्द्र से संपर्क करने के लिए तीन विकल्प होंगे। 1. हिन्दी 2. संस्कृत 3. प्रान्तीय भाषा। तथा देश का कार्य इंग्लिश में बिल्कुल नहीं चलेगा और न ही देश में कहीं पर भी अंग्रेजी पढ़ाना अनिवार्य होगा। तब अंग्रेजी को छात्र आवश्यकतानुसार पढ़ेंगे न कि अनिवार्य रूप में। कार्यालयों में अनुवादक रखने होंगे। हिन्दी में काम करने वालों देश में प्रत्येक कार्य में वरीयता दी जाए तथा हिन्दी रोजी-रोटी से जोड़ दिया जाए। तो स्वत: बिना किसी के कहे लोग हिन्दी में कार्य करना तथा हिन्दी पढ़ना लिखना शुरू कर देंगे। जैसे कि अंग्रेजी की वरीयता के कारण से आज अंग्रेजी बढ़ रही है ऐसे हिन्दी को वरीयता देने से हिन्दी स्वयं ही बढ़ जाएगी। शुरू शुरू में लोग अपनी मातृभाषाओं का प्रयोग करेंगे लेकिन हिन्दी प्रान्त अधिक होने के कारण धीरे-धीरे सभी हिन्दी का प्रयोग करने लग जायेंगे। हां हमें प्रत्येक मातृभाषा के साथ संस्कृत जोड़कर पढानी होगी। उससे एक भाषा शीघ्र पनप जाएगी क्या सरकारें इस पर ध्यान देंगी? पिछली सरकार चाहती तो हिन्दी संस्कृत सहित भारतीय भाषायें बहुत आगे बढ गई होती। देखते हैं राजग व भाजपा की राष्ट्रवादी सरकार राष्ट्रभाषा को स्थापित करेगी या दिखावा मात्र ही करती रहेगी।

कैंची की तरह काटना नहीं, सुई की तरह सीना सीखें

कन्हैयालाल आर्य, कोषाध्यक्ष आर्यप्रतिनिधि सभा हरयाणा

दुनिया में दो तरह के लोग होते हैं 1. जिनके जीवन से सुगन्ध निकलती है, यह उनके पुण्य कर्मों की कीर्ति है। वह इस समाज में सुई की तरह परिवारों को समाज को सीने का कार्य करते हैं।2. जिनके जीवन से दुर्गन्ध निकलती है, उनके पाप के फल हैं। उनका स्वभाव कैंची की तरह काटना होता है। वे मूर्ख लोग उठते-बैठते, चलते-फिरते दूसरों के दोष देखते रहते हैं और उन दोषों के आधार पर कैंची का स्वभाव बनाते हुए दूसरों को काटते रहते हैं। परिवारों और समाज के विखण्डन में आनन्द लेते हैं, क्योंकि वे इस विश्व की कामनाओं के जाल में फंसे रहते हैं। ऐसा व्यक्ति केवल अपने स्वार्थ की चिन्ता करता है दूसरों को हानि पहुँचाने में निन्दा करने में आनन्द का अनुभव करता है। वह थोड़ा-सा दु:ख आने पर अपने आपको संसार का सबसे बड़ा दु:खी व्यक्ति समझने लगता है। जरा-सा सुख आने पर इतना उछलता है कि उसे अपने समान कोई सुखी नहीं लगता। वह अहंकार में लिप्त हो जाता है। ऐसा व्यक्ति स्थित- प्रज्ञ नहीं होता। उसका स्वभाव सुई की तरह दिलों को जोड़ने में नहीं कैंची की तहर दिलों को तोड़ने, दु:खाने में लगा रहता है। परन्तु वह मूर्ख व्यक्ति यह नहीं जानता कि दर्जी सुई को सदा टोपी पर या कमीज की जेब पर लगाता है और कैंची सदा दर्जी के पैरों के पास पड़ी रहती है। जोड़ने वालों का सदा सम्मान होता है तोड़ने और कटाने वाले कुछ समय के लिए चाहे अपने मन में खुश हो लें परन्तु अन्ततः उन्हें अपमानित होना पड़ता है। अतः बन्धुओ! कैंची की तरह काटना नहीं, सुई की तरह सीना सीखो।

भगवान् को पाना कठिन नहीं है। एक तरफ से हटाओ, अपने आपको दूसरी जगह से जोड़ दो। पर ध्यान रखना एक तरफ से सावधानी से उखाड़ना होगा, ऐसा न हो कि जड़ तो वहीं रह जाये और पौधा बाहर, तो न इधर के रहोगे न उधर के। संसार की मिट्टी से उखड़कर स्वर्ग की मिट्टी में अपने आपको जोड़ना है बहुत सम्भालकर जोड़ना होगा। बुल्लेशाह से किसी ने पूछा, भगवान् को पाने के लिए क्या करना चाहिए? तो बुल्लेशाह ने कहा बुल्ले या "रब दा की पांवडा-ऐथों उठाणा, उथों लांवडा" जैसे पौधे को माली उखाड़ता है और दूसरी तरफ जाकर लगा देता है ऐसे ही मन को तुम इस संसार से हटाओ और परमात्मा में जोड़ दो, परमात्मा मिल जायेगा। कितना सरल रास्ता बताया। परन्तु इसके लिए आवश्यक है योगी को आत्मप्रशंसा से दूर हटाना। जब योगी विभूतियाँ प्राप्त कर लेता है तो संसार के लोग उनकी प्रशंसा करने लगते हैं उनके मान सम्मान में में पलकें बिछाने लगते हैं उन्हें महाराजाधिराज, 1008 और न जाने किन-किन पदवियों से अलंकृत करने लगते हैं। यदि योगी इसमें फंस गया तो उसका पतन निश्चित है। वह पुनः उसी लोक में चला जायेगा। इसलिए योगी को इन प्रशंसाओं से मुक्त होना होगा। वह इन चिकनी चुपड़ी बातों को अनसुना करदे, सुख-

दु:ख में एक-सा रहे, अपने 'मैं' से प्रभावित न हो, तभी यह योगी कैवल्य की ओर बढ़ सकता है।

जीवन की ऊँचाइयाँ प्राप्त करने के लिए हमें इस साधना से गुजरना चाहिए। हमें ऊँचाइयों पर चढ़ते-चढ़ते प्रतिदिन अपने आपको टटोलना चाहिए कि मुझे अहंकार तो नहीं होगया। अपना परीक्षण प्रतिदिन करो। यह चिन्तन करो कि मैंने अपनी 'मैं' का कितनी बार प्रयोग किया। मैं ख्याल रखूं कि कल मेरी 'मैं' समाप्त होनी चाहिए। धीरे-धीरे अभ्यास से 'मैं' समाप्त होती चली जायेगी और 'मैं' के स्थान पर तू आती जायेगी। यही सच्ची समाधि है।

बच्चों की तरह बनकर रहोगे तो सुख पाओगे-

बच्चा पैदा होता है तो वह परमात्मा का सन्देश लेकर आता है कि ऐ दुनिया के लोगो! तुम प्यार भी करते हो, घृणा भी करते हो। परन्तु प्यार बाँटना सीखो, घृणा नहीं। देखो! हम दो बच्चे आपस में आज लड़ रहे हैं, उसी समय हमारी मातायें आ गईं। उन्होंने अपने अपने बच्चे का पक्ष लेते हुए आपस में दुश्मनी पाल ली। परन्तु हमने दूसरे दिन एक को क्षमा करते हुए फिर इकट्ठे खेलना शुरू कर दिया है। इसी प्रकार तुम भी हमारी तरह बच्चे बनकर देखो। एक दूसरे के साथ शत्रुता पालने की बजाये भूलना सीखो। मित्रता करना सीखो, तभी यह संसार दु:खों के सागर के स्थान पर सुखों एवं अमृत का झरना बन जायेगा।

पुण्य कर्म करने के लिए साहस की आवश्यकता होती है। जो सच्चे और धार्मिक हैं वे अपने इकरारों पर अटल रहते हैं। उन्हें कोई बड़े से बड़ा प्रलोभन पथभ्रष्ट नहीं कर सकता, क्योंकि वे स्थितप्रज्ञ होते हैं। उनमें से किसी प्रकार की कामनाओं का जाल नहीं होता। वह ज्ञानी बनकर एक संन्यासी, एक सन्त का जीवन जीने वाला हो जाता है। भले ही वह किसी देश में रहे, किसी भेष में रहे, किसी परिवेश में रहे, किसी भी स्थिति और परिस्थिति में रहे, वह अन्दर से जागरित होता है। ऐसे व्यक्ति के विषय में अर्जुन कृष्ण से पूछता है "वह स्थितप्रज्ञ व्यक्ति किस भाषा में बोलता है? उसका व्यवहार कैसे होता है?" तब अर्जुन की जिज्ञासा को शान्त करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऐसे स्थितप्रज्ञ व्यक्ति की वाणी और शब्दावली अपने में अनदेखी होती है। ऐसा व्यक्ति अपने में केन्द्रित न होकर समष्टि का अंग बन जाता है। वह कामनारहित सम्राट् बन जाता है। उसका मन अन्दर से सन्तुष्ट होता है। वह इतना समृद्ध हो जाता है कि बाहर की धन दौलत और समृद्धि उसके सम्मुख नगण्य हो जाती है। वह एक ऐसे आनन्द से परिपूर्ण हो जाता है, जिसका कोई अन्त नहीं है। अत: आत्मप्रशंसा से दूर हटते हुए बच्चों की तरह सरल, सुई की तरह समाज को जोड़ते हुए, एक घर को छोड़ते हुए दूसरे घर में प्रवेश करते हुए, पिछले घर का मोह न करते हुए और अगले में आसक्ति न करे तभी हमारा कल्याण होगा। सुई की तरह सीना सीखें, कैंची की तरह काटना नहीं। यही जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।

सर्म्पक सूत्र
4/45, शिवाजी नगर, गुड़गांव, हरियाणा

॥ ओ३म् ॥

२६ जून २०१४

आबूधाबी (यू.ए.ई)

समादरणीय श्रीयुत सम्पादक सुधारक

सादर नमस्ते।

* ईश्वरकृपयात्र कुशलं तत्रापि भवतु।

* अनेक आर्यसज्जनों के आमन्त्रण पर जून १४ को यहाँ पहुँचा, खाड़ी देशों की यह मेरी दूसरी यात्रा है। यहाँ मैं आर्य परिवारों को सांख्यदर्शन का अध्यापन, ध्यान, प्रवचन, शंका समाधान करता हूँ। जब भी अवाकश मिलता है, आस-पास के देशें में भ्रमणार्थ जाता हूँ। दुबई देश में रहते हुवे मैंने अबुधाबी, शारजहा, अजमान फजैराह, रस् अल् खैमाह आदि सात देशों की यात्रा ही है। मुझे बहुत कुछ नया ज्ञान विज्ञान, प्रत्यक्ष देखने, सुनने, पढ़ने को मिला, यह मेरी १६वीं विदेश प्रचार यात्रा है।

* २०वीं शताब्दी के मध्य तक इन खाड़ी देशों में, खारे समुद्र, रेत के टीलों, गर्म धूलभरी हवाओं के अलावा कुछ भी नहीं था। अतयन्त प्रतिकूल प्राकृतिक विपन्न जलवायु में ये कैसे जीते थे, यह कल्पना भी नहीं की जा सकती है। लेकिन आज वहीं पर अत्याधुनिक तथा विशाल ५०-८०-१०० मंजिले आकर्षक भवनों को देखते हैं तो बड़ा आश्चार्य होता है, मन में विचार होता है कि कहीं स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं, कोई जादू तो नहीं है!!! वास्तविकता यह है कि यह सब; मन में किसी उद्देश्य को बनाकर उसको पूरा करने हेतु प्रबल भावना, दृढ़ संकल्प, परम पुरुषार्थ तथा घोर तपस्या का परिणाम है।

* मैंने सुना कि यहाँ के (शेख) राजा, जब अमेरिका, यूरोप आदि देशों की यात्रा करते हुए वहाँ की भौतिक सुख-सुविधाओं से युक्त, सब प्रकार की उन्नति देखते थे तो उनके मन में यह विचार उत्पन्न होते थे कि क्या मेरे देश में ऐसे भवन, चौड़ी सड़कें, यातायात के साधन, होटल, रिसोर्ट, क्लब, बाग-बगीचे, मनोरंजन के साधन, व्यापार, मण्डी, सुख-सुविधाएँ बनायी जा सकती हैं, जिनके कारण लोग आकर्षित होकर आवें, रहें?

* बस एक दिन संकल्प कर लिया, योजनायें बनायी गईं, अमेरिका, यूरोप, एशिया के देशों से सम्पर्क किया, मंत्रणा हुई, अनुबन्ध हुवे, लोहा, सीमेन्ट, पत्थर, लकड़ी, इंजीनियर, श्रमिक आदि जिन-जिन साधनों की अपेक्षा थी, प्राप्त किये गये। कार्य प्रारम्भ होगया, शेख के मन में एक ही भावना कि कोई भी निर्माण हो, अद्भुत, अद्वितीय आकर्षक होना चाहिए। समुद्र में मीलों तक पत्थर, कंकर, रेत डालकर, पहाड़ बनाकर उन पर आकाश को छूने वाली, ऊँची, भव्य इमारत बनायी गयीं। और सुन्दर नगर बसाया गया। दूसरी तरफ भूमि में गहरी खाइयाँ खोदकर समुद्र के पानी को नहरों के रूप में फैला दिया गया। अन्य देशों से जहाजों में उपजाऊ मिट्टी मंगाकर, रेत के मैदानों में बिछाकर, बड़े-बड़े, उद्यान, खेत, बगीचे, उपवन, वाटिकाएँ बना दी। जहाँ घास का एक तिनका नहीं उगता था वहाँ पर रंग-बिरेंगे, फूल, फल घास के मैदान बना दिये गये। बसों, रेलों, ट्रामों भण्डारों आदि की समुचित व्यवस्था करके सर्वत्र आवागमन को सरल बना दिया।

* कृत्रिम रूप से बने सभी साधन सुविधाओं से युक्त उत्तम व्यवस्था, कुशल प्रबन्ध, अनुशासन, दण्डव्यवस्था के कारण विश्व के १०० से भी अधिक देशों के नागरिक यहाँ अनेक प्रकार के व्यवसायों में लगे हुवे हैं। अमीरात के देश विश्व का एक

महत्त्वपूर्ण व्यापारिक एवं पर्यटन का केन्द्र बन गया है। इन देशों के मुख्य नगरों में घूमते हैं तो यह भ्रम हो जाता है कि कहीं हम लन्दन पेरिस, टोकियो, सिंगापुर में तो नहीं हैं ?

* इन देशों के वैभव, सम्पदा, विकास, उन्नति को देखकर, वही प्रश्न मन में उपस्थित होता है कि ये देश अत्यन्त प्रतिकूल वातावरण, जलवायु तथा विपन्नता के होते हुवे, कुछ ही वर्षों में देश को स्वर्ग के समान सम्पन्न सुन्दर बना सकते हैं तो हम क्यों नहीं ? जहाँ पर हर प्रकार की प्राकृतिक सम्पदा, साधन, अनुकूलता हो। जिस देश में शिल्प, कला, शिक्षा, चिकित्सा, विज्ञान, संस्कृति, सभ्यता, खानपान, वेशभूषा, धर्म, आचार-विचार, व्यवहार, सिद्धान्त तथा श्रेष्ठ गौरवमयी आदर्श परम्परायें हजारों-लाखों वर्षों से चली आ रही हैं, वह उन्नत क्यों नहीं हो रहा ? इन देशों के समक्ष हमारे इस आर्यावर्त की ऐसी दुर्दशा क्यों है ? हमारे देश के अधिकांश लोग और उनका जीवन दयनीय, निकृष्ट, विपन्न, घृणित तुच्छ, हेय क्यों है ? हम चाहते ही नहीं हैं, चाहें तो हो सकता है।

* विश्व भ्रमण करने के पश्चात् मेरी समझ में यही आया है कि हमने उन्नति की सीमा व्यक्ति या परिवार तक बना ली है। हमारे नगर, राज्य, राष्ट्र का नाम विश्व में हो, हमसे लोग प्रेरणा लें, सीखें, अनुकरण करें, यहाँ आवें, हमारा सम्मान करें, ये विचार कभी भी मन में उठते नहीं हैं तो कार्य क्या होगा। हे देव हमारे देशवासियों को दयनीय दशा से उबरकर, सम्पन्न बनने की प्रेरणा आप ही प्रदान करो। हम अपनी लुप्त हुई गरिमा को पुनः जीवित करके, विश्वगुरु बनकर, ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' के आपके वेद उद्‌घोष को साकार करें, यही प्रार्थना है स्वीकार करें- ज्ञानेश्वरार्य।

अध्यात्मपथ (पंजी.)

मासिक पत्रिका

द्वारा

ऋषिपथ के पथिक, वैदिकधर्म के ध्वजवाहक, विलक्षण प्रतिभा के धनी, महान् समाजसेवी, महान् शिक्षाविद, अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों-पुरस्कारों से अलंकृत एवं हरियाणा आर्य - प्रतिनिधि सभा के कोषाध्यक्ष

श्री कन्हैयालाल आर्य को

अध्यात्मरत्न

पं० रामप्रसाद बिस्मिल जी की पावन जयन्ती के शुभ अवसर पर स्वस्ति महायज्ञ, विराट् भजन, सन्ध्या एवं सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। यह आयोजन दिल्ली की सभा आर्यसमाजों की ओर से बी. ब्लॉक जनकपुरी में किया गया। इस समारोह में मुख्यअतिथि दिल्ली सरकार के पूर्व मंत्री एवं विधायक श्री जगदीश मुखी, दिल्ली नगर निगम के महापौर श्री खुशीराम एवं मुख्यवक्ता भावनगर (गुजरात) विश्वविद्यालय के प्रो० डॉ० सुन्दरलाल कथूरिया थे। कार्यक्रम का संयोजन अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक विद्वान् आचार्य चन्द्रशेखर ने किया। सभी वक्ताओं ने पं० रामप्रसाद बिस्मिल के अभूतपूर्व त्याग, बलिदान एवं देशभक्ति की भावना को स्मरण किया। इस अवसर पर गुड़गांव निवासी कन्हैयालाल आर्य जी को उनके अध्यात्म एवं समाजसेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए ''अध्यात्म रत्न'' से विभूषित किया गया। अध्यात्म पथ परिवार भी आर्य जी को सम्मानित कर गौरवान्वित है।

- चन्द्रशेखर शास्त्री

प्राचीन पाठशालाओं के खर्च की व्यवस्था

गतांक से आगे....

-श्री के.सी. श्रीवास्तव

हमारे पास उपाय केवल यह है कि हम भारतवासियों को यूरोपियन ढंग की उन्नति में लगा दें, फिर पुराने ढंग पर भारत को स्वाधीन करने की इच्छा ही उनमें से जाती रहेगी और उनका लक्ष्य भी यह न रह जायेगा कि हम स्वतंत्र हों। देश में अचानक राजक्रान्ति फिर संभव होजायेगी और हमारे लिए भारत पर अपना साम्राज्य कायम रखना बहुत काल के लिये असंदिग्ध होजायेगा। भारतवासी फिर हमारे विरुद्ध विद्रोह न करेंगे। फिर उनके राष्ट्रीय प्रयत्न यूरोपियन शिक्षा प्राप्त करने और उसे फैलाने और अपने यहां यूरोपियन संस्थायें कायम करने में ही पूरी तरह लगे रहेंगे, जिससे हमें कोई हानि न हो पायेगी। शिक्षित भारतवासी स्वभावत: हमसे चिपटे रहेंगे। हमारी समस्त प्रजा में किसी भी श्रेणी के लोगों के लिये, जिनके विचार अंग्रेजी सांचे में ढाले गये हैं, ये लोग शुद्ध भारतीय राज के काम के ही नहीं रह जाते, यदि जल्दी से देश में स्वदेशी राज कायम होजाये तो उन्हें उससे हर प्रकार का भय रहता है।

मुझे आशा है कि थोड़े ही दिनों में भारतवासियों का संबंध हमारे साथ वैसा ही हो जायेगा जैसा किसी समय हमारा रोमन लोगों के साथ था। रोमन विद्वान् टैलीटस लिखता है कि जूलियस ऐग्रीकोला की यह नीति थी कि बड़े बड़े अंग्रेज़ों के लड़कों को रोमन साहित्य और रोमन विज्ञान की शिक्षा दी जाय और उनमें रोमन सभ्यता के ऐश आराम की रुचि पैदा कर दी जाये। हम सब जानते हैं कि जूलियस ऐग्रीकोला की यह नीति कितनी सफल साबित हुई। यहां तक कि जो अंग्रेज पहले रोमन लोगों के कट्टर शत्रु थे वे शीघ्र ही उनके वफादार मित्र बन गये और उन अंग्रेजों के पूर्वजों ने जितने प्रयत्न अपने देश पर रोमन लोगों के हमले को रोकने के लिये किये थे उससे कहीं अधिक जोरदार प्रयत्न अब उनके वंशज रोमन लोगों को अपने यहाँ कायम रखने के लिये करने लगे। हमारे पास रोमन लोगों से कहीं अधिक बढ़कर उपाय मौजूद हैं, इसलिये हमारे लिए यह शर्म की बात होगी यदि हम भी रोमन लोगों की तरह भारतवासियों के चित्तों में यह भय उत्पन्न न कर दें कि यदि हम जल्दी से देश से निकल गये तो तुम लोगों पर भयंकर आपत्ति आ जायेगी।

"ये विचार मैंने केवल अपने दिमाग से सोचकर ही नहीं निकाले, वरन् स्वयं अनुभव करके और देखभाल कर मुझे इन नतीजों पर पहुंचना पड़ा। मैंने कई वर्ष हिन्दुस्तान के ऐसे हिस्सों में बिताए जहां हमारा राज अभी नया-नया जमा था, जहां पर कि हमने लोगों के भावों को दूसरी ओर मोड़ने की अभी कोई कोशिश भी नहीं की थी और जहां पर कि उनके राष्ट्रीय विचारों में अभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। उन प्रान्तों में छोटे और बड़े, धनी और दरिद्र, सब लोगों के सामने केवल अपनी राजनीतिक दशा सुधारने की ही एकमात्र चिन्ता थी। उच्च श्रेणी के लोगों के दिलों में यह आशा बनी हुई थी कि हम फिर से अपने प्राचीन प्रभुत्व को प्राप्त कर लें और निम्न श्रेणी के लोगों में यह आशा बनी हुई थी कि यदि देशी राज फिर से स्थापित हो गया तो धन और वैभव प्राप्त करने के मार्ग हमारे लिये फिर से खुल जायेंगे। जिन समझदार भारतवासियों को औरों की अपेक्षा हमसे अधिक प्रेम था उन्हें भी अपनी कौम की पतित अवस्था को सुधारने का इसके सिवा और कोई उपाय न सूझता था कि अंग्रेजों को तुरन्त देश से निकालकर बाहर कर दिया जाये। इसके बाद मैं कुछ वर्ष बंगाल में रहा। वहाँ मैंने शिक्षित भारतवासियों में बिल्कुल दूसरी ही तरह के विचार देखे। अंग्रेजों के गले काटने का विचार करने के स्थान पर वे लोग अंग्रेजों के साथ जूरी बनकर अदालतों में बैठने या बेंच मजिस्ट्रेट बनने की आकांक्षायें कर रहे थे।"

सर चार्ल्स ट्रेवेलियन के पूर्वोक्त पत्र के विषय में पार्लियामेण्ट की कमेटी के सदस्यों और ट्रेवेलियन में कई दिन तक प्रश्नोत्तर होता रहा, जिसमें ट्रेवेलियन ने और अधिक स्पष्टता के साथ अपने विचारों को दोहराया और उनका समर्थन किया। इस प्रश्नोत्तर ही में २३ जून १८५३ को ट्रेवेलियन ने कमेटी के सामने बयान किया- "अपने यहाँ की शुद्ध स्वदेशी पद्धति के अनुसार मुसलमान लोग हमें 'काफिर' समझते हैं, जिन्होंने कि इस्लाम की

सर्वोत्तम बादशाहतें मुसलमानों से छीन ली हैं। उसी प्राचीन स्वदेशी विचार के अनुसार हिन्दू हमें 'म्लेच्छ' समझते हैं अर्थात् इस तरह के अपवित्र विधर्मी जिनके साथ किसी तरह का भी सामाजिक संबंध नहीं रखा जा सकता और वे सबके सब मिलकर अर्थात् हिन्दू और मुसलमान दोनों हमें इस तरह के आक्रामक विदेशी समझते हैं जिन्होंने उनका देश उनसे छीन लिया है और उनके लिये धन और मान प्राप्त करने के समस्त मार्ग बंद कर दिये हैं। यूरोपियन शिक्षा देने का नतीजा यह होता है कि भारतवासियों के विचार एक बिल्कुल दूसरी ही ओर मुड़ जाते हैं। पाश्चात्य शिक्षा पाए हुए युवक स्वाधीनता के लिये प्रयत्न करना बंद कर देते हैं, वे फिर हमें अपने शत्रु और राज्यापहारी नहीं समझते, बल्कि हमें अपने मित्र, अपने मददगार और बलवान् और उपकारशील मनुष्य समझने लगते हैं। वे यह भी समझने लगते हैं कि भारतवासी अपने देश के पुररुज्जीवन के लिये जो कुछ इच्छा भी कर सकते हैं वह धीरे-धीरे अंग्रेजों ही के संरक्षण में संभव हो सकती है। यदि राजक्रान्ति के पुराने देशी विचार कायम रहे तो संभव है, कभी न कभी हमारा अस्तित्व भारत से मिट जाये। वास्तव में जो लोग इस ढंग से भारत की उन्नति की आशा कर रहे हैं वे इस लक्ष्य को सामने रखकर हमारे विरुद्ध लगातार षड्यंत्र और योजनायें रचते रहते हैं। इसके विपरीत नयी और उन्नत पद्धति के अनुसार विचार करने वाले भारतवासी यह समझते हैं कि उनका उद्देश्य बहुत धीरे-धीरे पूरा होगा और उन्हें अंतिम लक्ष्य तक पहुंचते-पहुंचते संभव है युग बीत जायें।"

जांच कमेटी के अध्यक्ष ने ट्रेवेलियन से और अधिक स्पष्ट शब्दों में पूछा कि आपके प्रस्ताव का अंतिम लक्ष्य भारत और इंग्लैण्ड के राजनीतिक संबंध को तोड़ना है या उसे सदा के लिए कायम करना है? इस पर ट्रेवेलियन ने फिर उत्तर दिया-"मुझे विश्वास है कि भारतवासियों को शिक्षा देने का अंतिम परिणाम यह होगा कि भारत और इंग्लैण्ड का पृथक् हो सकना दीर्घ और अनन्तकाल के लिए टल जाएगा, यदि इससे विरुद्ध नीति का अनुसरण किया गया तो नतीजा यह होगा कि किसी भी समय हम भारत से निकाले जा सकते हैं और निस्संदेह बहुत जल्दी और बड़ी जिल्लत के साथ निकाल दिए जाएंगे।"

"मैं एक ऐसा रास्ता बता रहा हूं जो हमारे राज के स्थायित्व के लिए सबसे अधिक हितकर होगा। अनेक वर्षों तक खूब अच्छी तरह सोच समझकर मैंने ये विचार कायम किए हैं। मुझे विश्वास है कि मैं इस विषय को पूरी तरह समझता हूं। मैं एक परिचित उदाहरण आपके सामने प्रस्तुत करता हूं। मैं बारह वर्ष भारत में रहा। इनमें से पहले छ: वर्ष मैंने उत्तर भारत में गुजारे। मेरा मुख्य स्थान दिल्ली था। शेष छ: वर्ष मैंने कलकत्ते में बिताए। जहां पर मैंने पहले छ: वर्ष वहां गुजारे वहां पर पुराने देशी विचारों का राज था, वहां पर लगातार युद्ध और युद्धों की ही अफवाहें सुनने में आती थीं। उत्तर भारत में भारतवासियों की देशभक्ति केवल एक ही रूप धारण करती थी, वे हमारे विरुद्ध साजिशें कर रहे थे, हमारे विरुद्ध विविध शक्तियों के संगठित करने की युक्तियां सोच रहे थे, इत्यादि। इसके बाद मैं कलकत्ते में आया। वहाँ मैंने बिल्कुल दूसरी हालत देखी। वहाँ पर लोगों का लक्ष्य था-स्वतंत्र अखबार निकालना, म्युनिसिपैल्टियां कायम करना, अंग्रेजी शिक्षा फैलाना, अधिकाधिक हिन्दोस्तानियों को सरकारी नौकरियां दिलवाना और इसी तरह की और अनेक बातें।"

सन् 1853 में उक्त विमर्श के बाद कंपनी के डायरेक्टरों ने 19 जुलाई सन् 1854 को गवर्नर जनरल लॉर्ड डलहौजी के नाम वह प्रसिद्ध पत्र भेजा जो सन् 1854 के "एजुकेशन डिसपैच" के नाम से प्रसिद्ध है तथा जिसे "वुड्स डिसपैच" भी कहते हैं, क्योंकि सर चार्ल्स वुड उस समय कंपनी के "बोर्ड ऑफ कंट्रोल" के प्रेसीडेंट थे।

इस पत्र में डायरेक्टरों ने अपनी भारत-हितैषिता की काफी प्रशंसा की है, किन्तु पत्र में यह भी लिखा है कि शिक्षा की इस नई योजना का उद्देश्य "शासन के हर विभाग के लिए आपको विश्वसनीय और होशियार नौकर दिलवाना है।"

इस प्रकार अंग्रेजों की शिक्षा नीति ने इस देश की प्राचीन शिक्षापद्धति को समाप्त प्राय: कर दिया। अंग्रेजी राज्य में संस्कृत और फारसी भाषा का स्थान अंग्रेजी ने ले लिया।

देशविभाजन के समय की एक हृदयविदारक दुर्घटना

-विद्यामित्र ठुकराल, आर्यसमाज ग्रीनपार्क, दिल्ली

इस दुर्घटना का विवरण देने से पूर्व मैं अपने परिवार की पृष्ठभूमि का परिचय देना उपयुक्त समझता हूँ। मेरे दादा श्रीगोपालदास ठाकुर कट्टर आर्य थे। जब महर्षि दयानन्दजी पंजाब में वेदप्रचार कर रहे थे, उन दिनों महर्षि जी के उपदेशों से प्रभावित होकर दादाजी ने अपने ग्राम बद्दोमली (तहसील नारोवाल, जिला स्यालकोट) में आर्यसमाज की स्थापना की थी। हमारे घर में प्रतिदिन यज्ञ होता था। मेरे दादाजी आदि चार भाई थे। श्रीगोपालदास, श्रीहवेलीराम, श्रीबेलीराम और कर्मचन्द। कर्मचन्दजी के अतिरिक्त सभी कट्टर आर्य थे। मेरे पिताजी श्री प्रभुदयालजी थे और मेरी माता जी का नाम द्रौपदीदेवी था। पिताजी का जन्म सन् १८९० में हुआ था। ये चार भाई थे- महाशय रामचन्द्र, बरकतराम और वेद्रप्रकाश। मेरे मामा श्री खशीराम जी बहुत बड़े जागीरदार और कट्टर आर्य थे। इनका ग्राम पाघियां, जिला शेखूपुरा में था। यह स्थान हमारे ग्राम बद्दोमली से ३ मील दूर था। हम चार भाई और तीन बहनें थी। बलदेवराज, सुखदेवराज, विश्वमित्र, विद्यामित्र, शान्तिदेवी, सुमित्रादेवी और सुशीलादेवी। जब सुशीला १४ वर्ष की थी तो सन् १९४६ में मुसलमानों द्वारा इसका अपहरण कर लिया गया। भाग्यवशात् मुसलमान मेरे मामा के गाँव पाघियां में ले गये। चर्चा चलने पर मेरे मामाजी ने सम्पर्क किया तो पता लगा यह लड़की हमारे ही परिवार की है तो उन दुष्टों के चंगुल से उसे छुड़ाया और अपने पास रखकर ही एक सम्पन्न परिवार में उसकी शादी कर दी। भारत विभाजन के दो मास बाद वह बहन भी भारत में ही आगई।

अगस्त १९४६ का महीना था। वह पूरा मास अफरा तफरी, अनिश्चित, आगजनी, धर्मान्तरण और मारकाट में बीत रहा था। मेरे दादाजी ने डी.ए.वी. स्कूल के लिए भूमि प्रदान की थी, वह स्थान अभी अभी तक गोपालनगर के नाम से प्रसिद्ध था। उस स्कूल में आर्यसमाज के उत्सव भी होते थे, वहाँ बाहर से पधारने वाले एक हजार लोगों के निवास का पूरा प्रबन्ध था। आर्यसमाज बद्दोमली के प्रधान श्रीमथुरादास थे और मन्त्री थे मेरे दादा गोपालदास ठकुराल।

मुसमानों के आतंक से १३ अगस्त से २५ अगस्त तक सभी हिन्दू लोग अपने-अपने घरों में बन्द होगये थे। कारण कि मेरे दादाजी ने कहा हम लोगों पर कभी आक्रमण होसकता है अतः सभी सुरक्षा हेतु सावधान होकर घरों में ही रहे रहो। जवान लोग दिनरात पहरा देते रहते थे। मैं उस समय दस वर्ष का था २७ अगस्त को हिन्दू, सिख, मुसलमानों ने मिलकर एक मीटिंग आर्यसमाज मन्दिर में बुलाई। मुसलमानों ने कहा-हम इतने वर्षों तक साथ रहे हैं, अतः हम पर भरोसा करो और अपने घर तथा दुकान का सामान हथियार, रुपये, जेवर, घरों की चाबियां आदि सब कुछ इन बोरियों में भरदो और दो घण्टे बाद यहाँ से निकलकर शाह साहब के मकान पर चले जाओ, वहां सबको सुरक्षितरूप से रक्खा जायेगा। इस घोषणा को सुनकर मेरे दादाजी ने कहा-इस घोषणा में सच्चाई नहीं है, यह हम सबको इकट्ठा करके मारने का षड्यन्त्र है यह सुनकर मेरी माताजी ने मुझसे कहा- तू अपने पिता से कह कि एक कनस्तर मिट्टी का तेल तुरन्त लाकर दे। दादाजी ने यह तय किया कि जब तक हम जीवित हैं- स्त्रियों को हानि नहीं होने देंगे। यदि हम मर गये तो-दादी, चाची, मातायें-जवान लड़कियाँ सभी चिता बनाकर जल मरना, परन्तु मुस्लिम अत्याचारियों के हाथ नहीं आना। जब शाह साहब की घोषणा के अनुसार अधिकतर लोगों ने अपने घरों की चाबियां, धन-सम्पत्ति, जेवर आदि मुसलमानों की बोरियों में भर दिया तो दूसरी घोषणा हुई कि सभी काफ़िर (हिन्दू-सिख) शाह साहब के पास जाओ। लाचार होकर लोग जत्थे बाँधकर उधर चल पड़े। वहाँ पहुँचे तो वहाँ का दृश्य अत्यन्त हृदय विदारक दिखाई दिया। सिखों के केश और ढाढ़ी मूंडकर मुसलमान और हिन्दुओं को मुसलमान बना लिया गया। बच्चों का खतना कर दिया, जवान औरतों को मुसलमानों ने अपने घर में बिठा लिया और बूढ़ी औरतों की हत्या कर दी गई। सबके मुसलमानी नाम रख दिये।

यह सूचना मेरी माताजी को मिली तो उन्होंने स्नान किया, सन्ध्या की और सभी बुजुर्गों के पैर छूकर सती होने की आज्ञा माँगी। किन्तु इस बीभत्स कार्य के लिए जबान से कोई नहीं बोला। अन्त में मेरी माताजी ने चिता

बनाई, उस पर तेल छिड़का और मेरे पिताजी से कहा आप इसमें अग्नि दे दें। पिताजी किंकर्त्तव्य विमूढ होगये। माताजी ने कहा–दुराचारियों के हाथों अपवित्र होने से यही अच्छा है। माताजी ने सोचा जीवित पत्नी कैसे जलेगी, कष्ट होगा, तो तलवार से मेरी माताजी की गर्दन काटने लगे, कुछ कटी, कुछ बची, इसी अवस्था में माताजी जीवित ही सती होगई। इस प्रकार हमारे परिवार की १५ औरतें अपनी जान पर खेल गईं।

दूसरी ओर जो लोग शाह के मकान पर नहीं गये, वे रातभर इधर-उधर छिपते रहे और मुस्लिम गुण्डे हमें ढूँढते रहे, न मिलने पर घरों को लूटकर आग की भेंट चढ़ाते रहे। कुछ उत्साही हिन्दू जवानों ने घरों के ऊपर कास्टिक सोडा कड़ाही में उबालकर रख लिया, ईंट, रोड़ों के दो ढेर छतों पर जमा कर लिये। यह सब देखकर मिल्ट्री के रिटायर्ड लोग और मुसलमान मिलकर गोली, बम्ब आदि से हमला करने लगे। हमारा बचा हुआ परिवार दादाजी के घर चला गया। रात को गोलियां चलने लगी तो हम बच्चों को छत पर भेज दिया गया। जब आग लगती-लगती हमारे घर के पास आई तो रात के २ बजे हम एक छत से कूदकर दूसरे घर की छत पर पहुँच गये। कुण्डियां भीतर से बंद थीं, इसलिए मुसलमानों ने दरवाजे तोड़ दिये और भीतर घुस आये। हमारा सारा सामान लूट लिया। सामान बोरियों में भर-भरकर ले जाते रहे और लूटकर घरों में आग लगाते रहे। हम विवश होकर डरते-सहमते रहे। गलियों में रात भर भगदढ़ मचती रही। मेरे बड़े भाई ने आकर कहा माताजी जलकर मर गई। यह २८ अगस्त १९४७ की घटना थी। भाई ने बताया कि जब माताजी चिता पर लेटी तो पिताजी भी साथ ही जलना चाह रहे थे। इस पर दादाजी ने कहा–बुज़दिलो! बच्चों को कौन सम्भालेगा। यह सुनकर हाथ पकड़कर चिता पर से उठाया। बची हुई औरतों की जो हालत हुई वह आप समझ लेंगे। हम बच्चे तो सहमे, डरे हुए थे। बचे हुए हिन्दू जैसे-जैसे घरों से बाहर निकलते गये-कटते गये। शाह ने घोषणा की जो काफ़िर मेरे मकान पर आने से रह गये उन सबको मार काटकर चाहे वह घायल या मरा हुआ हो सबको कुए में फेंकते जाओ। कुए और गलियां लाशों से अटे पड़े थे। मेरे भाई बलदेव को मारने लगे तो उसने हाथ जोड़ दिये, उधर पिताजी को भी काट दिया, दूसरा भाई घायल होकर तड़प रहा था। सब अपनी जान बचाने को भाग रहे थे। किसी की सहायता करने की चिन्ता किसी को नहीं थी। मैं अपने चाचा-चाची के साथ एक बड़ी हवेली में घुस गया। उसमें पहले स्कूल चलता था। मुसलमान लोग चाची को छीनकर ले गये और उनकी कान की बाली ऐसे खैंची की कान फट गये। चाचा के पास दो छोटे बच्चे थे, उन्होंने वे मुझे सौंप दिये। चाचा को वहीं काट दिया गया।

मैं बच्चों को लेकर स्कूल की खिड़की से बाहर जाने लगा तो एक मौलवी हाथ में दराड़ा- (तिरछा दरात) लेकर उसी खिड़की से भीतर घुस गया और मेरे से पूछा भीतर कोई स्त्री है? मैंने कहा–पता नहीं। जब गुण्डे मुझे मारने लगे तो मैं ने दोनों बच्चे नीचे छोड़ दिये और मरने के लिए तैयार होगया तो मौलवी ने कहा–इस मासूम को मत मारो। मेरी जान बच गई। अपनी आबरू बचाने के लिए दादाजी ने मेरी दादीजी को कूए में फेंक दिया। मेरी चाची ने अपना बच्चा जोहड़ मे फेंककर आप भी जोहड़ (तालाब) में कूद गई। उसे मुसलमान निकाल ले गये। मेरे चाचा का दोस्त एक कसाई था, जब मेरे चाचा को घायल किया उसने कसाई के घर से चारपाई लाने के लिए कहा। किन्तु कोई नहीं लाया और चाचा घायल अवस्था में में ही लाशों के ढेर के नीचे दब गया। मियां मकान में हमारे परिवार के कुछ लोग मिले। उन्हें चावल खिलाये। मेरे चाचा किशनलाल के पेट में छुरा मारकर आँत बाहर निकाल दी उन्होंने मेरी गोद में प्राण छोड़े।

जो मिल्ट्री हमारी सुरक्षा के लिए आई थी, उसे मुसलमानों ने वापिस भेज दिया। हमारे कस्बे के पाँच हजार आदमी कत्ल कर दिये गये और दो हजार बाहर के व्यक्ति हमारे कस्बे में शरण लेने आये थे, वे भी कत्ल कर दिये गये।

इस प्रकार हम छिपते-छिपाते भागते हुए और पैदल चलते हुए रावी नदी पार करके रईया जुगदया, अजनाला-अमृतसर होते हुए फिरोजपुर पहुँच गये। इसके बाद भारत में आकर किस प्रकार कष्टों को सहन करते हुए अपने को धीरे-धीरे व्यवस्थित किया और आर्यसमाज के प्रति बचपन से जो लगाव था, वह किस प्रकार काम आया यह कभी बताने का प्रयास करूंगा। यह अतिसंक्षेप से वर्णन किया है।

साहित्य की रचना का प्रकार और उसके लाभ

-मेजर रतनसिंह यादव, जखाला गुडियाणी रेवाड़ी

विधाता की इस चित्र विचित्र सृष्टि में अनगणित जीवधारी अनन्त समय से इस भूमण्डल पर अपनी-अपनी जीवनलीला करते चले आ रहे हैं। इन समस्त जीवधारियों में जिसे सर्वोत्कृष्ट माना गया है, केवल वही मानव इतना सौभाग्यशाली है जिसे भाषारूपी अनुपम तथा अमोध उपहार प्राप्त है। शेष प्राणी तो मात्र कुछ ध्वनियाँ ही उत्पन्न कर केवल अपनी स्थूल तथा मूल आवश्यकताओं को प्रकट करने का प्रयास भर कर पाते हैं, वह भी आंशिकरूप से। इस भाषा की अमूल्य धरोहर को स्थूल तथा स्थायीरूप देने के लिए मनुष्य ने जो विभिन्न समयों तथा स्थानों में जो प्रयास किये, उन्हीं से विभिन्न लिपियों का प्रादुर्भाव हुआ। विश्व की प्राचीनतम संस्कृति, सभ्यता तथा समस्त विद्याओं के मातृदेश आर्यावर्त के भरतखण्ड के इस भारतवर्ष में ज्ञान विज्ञान का अथाह तथा अजस्त्र स्रोत अति प्राचीनकाल से प्रवाहमान रहा है। वेद, शास्त्र, पुराण इतिहास तथा साहित्य को संजोने का कार्य जिस लिपि में किया जाता रहा उसे ब्रह्मा द्वारा रचित होने से ब्राह्मी तथा पुनः देवों द्वारा प्रयोग की जाने से देवनागरी कहा जाता रहा है। यही देवनागरी अपनी वैज्ञानिकता, भावों को बद्ध करने की प्रबलक्षमता तथा सूक्ष्म से सूक्ष्मतर ध्वनियों के सक्षम आलेखन में समर्थ होने के कारण सर्वश्रेष्ठलिपि होने का दावा कर सकती है।

इस लिपि के बल पर मनुष्यों की एक पीढ़ी ने जो भी अनुभव अपने दीर्घ जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में बटोरे, वे कटुमधुर, खट्टे-मीठे, हर्ष-विषादयुक्त सभी प्रकार के थे। जिन्हें लिपि के माध्यम से संजोकर अपनी भावी पीढ़ी के लिए एक धरोहर के रूप में संचित करते रहने से संवर्धित ज्ञान का अथाह समुद्र विद्यमान है। यह निधि ज्ञान, विज्ञान, भूगोल, इतिहास, गणित, ज्योतिष, नक्षत्रविज्ञान, चिकित्सा पद्धतियों, प्रकृति के रहस्य, दर्शन, तर्कशास्त्र, तत्त्वचिन्तन, जरा, मृत्यु, जन्म, आवागमन, आत्मा, परमात्मा, साहित्य, किस्से-कहानी, कविताएँ, गीत, नाटक आदि बहुविध रूपों में संचित है।

परिस्थिति विशेष में, किसी संवेदनशील सहृदय तथा उर्वरकहृदय भावुक मनुष्य को मनस्थिति विशेष में जो अनुभव प्राप्त हुआ, भाव या विचार कौंधा, वह हठात् ही शब्दों के माध्यम से फूटकर बह निकला। वह शब्दसमूह अत्यन्त मार्मिक, प्रभावी तथा अभूतपूर्व होने के कारण दूसरे के लिए एक दुर्लभ तथा संग्रहणीय वस्तु बन गया। इसे लिपिबद्ध कर अपने तथा आनेवाली संततियों के लिए सौगात बना देने का लोभ भला मनुष्य कैसे संवरण कर पाता। परिणामस्वरूप साहित्य संचय के भण्डार विकसित होते चले गये। "उदरभरणमात्रेच्छा" तो पशुओं तक थी। जिन मनुष्यों की भी यही इच्छा थी, उन्होंने तो अन्नागार, धनागार, कोष तथा ईंट-पत्थरों के ऊँचे भवन तथा अट्टालिकाओं के निर्माण में अपना अमूल्य जीवन चुका दिया, पर साहित्य, संगीत और कला के पुजारियों ने जीवन के गहन समुद्र में गोते लगाकर जो दुलर्भ मोती ढूँढे या अनायास ही उनके हाथ लगे, पर उनकी पारखी निगाहों ने उनका मूल्य जाना, माला में पिरोकर स्वयं को तो सुसज्जित किया ही, साथ ही उस वचनातीत अमूल्यमाला को अपने सुयोग्य उत्तराधिकारियों को सौंपता चला गया। जब तक मनुष्यों में स्वयं को पशुओं से भिन्न श्रेष्ठ प्राणी समझने की प्रवृत्ति विद्यमान रहेगी, साहित्य की इस माला में मोतियों का पिरोना निरन्तर बना रहेगा, कदरदान इसकी कदर करते रहेंगे, सहृदयजन इसके रसास्वादन से तृप्त हो इस ब्रह्मानन्द सहोदर के अमृतपान से स्वजीवन सार्थक करते रहेंगे। भविष्य में भी यही क्रम अबाध गति से चलता रहे, इसमें शून्यकाल कभी न आये, अन्धकार इसे कभी ग्रसित न कर पाये, यह सनातन तथा अजस्त्र रहे, यही परमपिता, कालों के महाकाल से करबद्ध निवेदन है।

प्रत्येक उस समाज को जो सुशिक्षित है, सभ्य है तथा भावी पीढ़ियों के प्रति उत्तरदायित्व बोध का जरा भी ज्ञान है, वह समाज इस निधि की सुरक्षा, संवर्द्धन तथा सद् उपभोगकर इस संजीवनी से अपने तथा निकट जो भी होगा उसके सुहृदय को सिंचित करता रहेगा। जीवन संघर्ष में पगपग पर राह दिखाने वाले दीपक इसमें प्रकाशित हैं, संसार समुद्र के थपेड़ों से जब जीवन नौका डगमगाये, नाविक के सबल हाथों की शक्ति जब चुकने लगे, जब कभी भूले-भटके, किंकर्त्तव्यविमूढ हों, सन्देह का शिकार हों, द्विधा की दोहरे दो राहों पर खड़े पायें, रोग, शोक, परिताप बन्धन तथा व्यसन सतायें, काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, अहंकार के जाल में उलझ जायें, स्वजनों तथा परममित्रों की वंचना का शिकार होजायें, परिजनों की उपेक्षा या तिरस्कार मिले, विषार तथा मनोमालिन्य का घोर अन्धकार छाजाये, जीवन निरर्थक तथा निरुपाय प्रतीत होने लगे, तब-तब इस जीवन-दायिनी, कलिमलहारिणी, पाप-विनाशनी, नवजीवनदायिनी ज्ञानरूपी भागीरिथी में गहरी डूबकी लगाओगे तो सौ प्रतिशत स्वच्छ, पवित्र तथा तरोताजा होकर बाहर निकलोगे, पुन: शस्त्र ग्रहण कर जीवन संग्राम को विजित करोगे।

पर यह भागीरिथी नि:शुल्क पुण्यस्नान की स्वीकृति नहीं देती है, यों भी महान् व्यक्ति किसी से यों ही कुछ नहीं लिया करते हैं। ऋण का भार शीश पर क्यों धारण करें। अनृण होने का प्रतिदान बहुत सरल है। बस इतना करना कि यह भागीरिथी कलुषित न हो, इसका प्रवाह रुके नहीं, गतिमान रहे, स्वच्छ और सुरिक्षत। एक बार उन मनीषियों का कृतज्ञतापूर्वक स्मरण कर लेना जिन्होंने इन सुधा बिन्दुओं का निर्माण किया, बस तुम अनृण हो गये।

प्राचीन सत्साहित्य की तुलना एक विभिन्न रंगों, आकार-प्रकार तथा गंधों के गुलदस्ते से की जाये तो अधिक समीचीन होगा। कारण लम्बी जीवन यात्रा में जहाँ कहीं, जिस प्रकार का कोई पद्यखण्ड जिसने मुझे प्रभावित किया, जिसमें मुझे किसी प्रकार का शब्दसौन्दर्य, भावसौन्दर्य का उपदेश या शिक्षा दिखाई दी, मैंने भी उससे शिक्षा ली है।

इस भारतीय साहित्य में विषयों की विविधता की सूची बनाई जाये तो पर्याप्त लम्बी बन सकती है। फिर भी मुख्यत: नीति, शृंगार, वीररस, भक्ति, वैराग्य वात्सल्य, राजनीति, लोकनीति, लोक व्ययवधर, लोक अनुभव, कृषि, औषध, दिनचर्या, सूक्तियां, शब्दचातुर्य आदि विषयों की प्रधानता है। भाषा की प्राचीनता के कारण तथा अनेकानेक शब्दों के समय के तीव्र प्रवाह में बहकर प्रयोग में लुप्त होजाने के कारण काव्यार्थ ग्रहण में बाधा होने की आशंका अवश्य होती है। भाषा की प्राचीनता में पुराने शब्दों का तीव्र गति से विलीन होना, नवीन प्रचलित शब्दों का तीव्र समावेश आधुनिक युग में बहुत अधिक मात्रा में हुआ है और होता ही जा रहा है। अंग्रेजी भाषा के प्रचार-प्रसार ने इस गति को और भी तीव्र बना दिया है। यों तो भाषारूपी नदी का प्रवाह सनातन है, फिर भी इसमें कहीं सपाट मैदान की मन्दगति, कहीं झील की सी स्थिरता है तो कहीं प्रपात की सी असीम तेजी जो सब कुछ पीछे छोड़ तीव्रगति से आगे बढ़ जाना चाहती है। आधुनिक युग बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में स्वातन्त्र्यो-परान्त विकासशील भारत भाषा वेश, रीति-रिवाज, खानपान, पहरान, सामाजिक मर्यादायें सभी में आमूलचूल परिवर्तन जिस तेजी से घटित हुआ उसकी तुलना प्रपात की गति से की जाये तो उचित होगा। आधुनिक हिन्दी, जिसे खड़ी बोली कहा जाता है, मैं उसकी छोटी बहनों गुजराती, मराठी, अवधी, गोरखाली या नेपाली, भोजपुरी, पंजाबी आदि की अपेक्षा उर्दू, फारसी शब्दावली का बाहुल्य है। अत: प्राचीन काव्य के शब्द भण्डार में पाये जानेवाले शब्द हिन्दी में भले ही उर्दू फारसी के शब्दों द्वारा भगा दिये गये हों, पर मराठी, गुजराती, नेपाली, अवधी, ब्रज आदि में, इन भाषायी प्रदेशों के ग्रामीण अंचलों में अभी भी अपना आस्तित्व बचाये हुए हैं, वह भी आधुनिकों की अपेक्षा अशिक्षित ग्रामीणों में अधिक मिलेंगे। अत: सत्साहित्य की रक्षा और नवीन रचना हेतु सततप्रयास करते रहना चाहिये, जिससे भावी पीढ़ी सम्बल पाती रहे।

एक ऐतिहासिक पत्र-

ओ३म्

- गांव अलीपुर, (दिल्ली)
दिनाँक: २८-११-६४

पूज्य आचार्य भगवान्देव जी,

सादर प्रणाम।

निवेदन है कि आपकी आज्ञानुसार मैं निम्नलिखित सन् १८५७ ई० की स्वतन्त्रता की पहली लड़ाई में बलिदान होनेवाले वीरों की नामावली भेज रहा हूँ। जो कि अंग्रेजों द्वारा फाँसी पर चढ़ाये गये थे। नामावली क्रमानुसार इस प्रकार है-

१. श्री खूबी	सुपुत्र	श्री बहालसिंह	इस परिवार में से सूरतसिंह सुपुत्र श्री धर्मसिंह अभी तक जीवित है।
२. श्री मुखराम	सुपुत्र	श्री बसन्ती	
३. श्री रामचन्द्र	सुपुत्र	श्री जमनादास	
४. श्री राजपाल	सुपुत्र	श्री लायकराम	इस परिवार में से रणजीतसिंह सुपुत्र श्री लालाराम जीवित है।
५. श्री खेमकरण	सुपुत्र	श्री लायकराम	
६. श्री तुरती	सुपुत्र	श्री लायकराम	
७. श्री अमीचन्द	सुपुत्र	श्री लायकराम	
८. श्री बुधसिंह	सुपुत्र	श्री रतीराम	इस परिवार में से श्री भरतू सुपुत्र श्री रामबख्श का परिवार जीवित है।
९. श्री बहालसिंह	सुपुत्र	श्री रतीराम	
१०. श्री बहादुर	सुपुत्र	श्री रतीराम	
११. श्री सीलका	सुपुत्र	श्री साहब राय	इस परिवार में से श्री दीपचन्द सुपुत्र श्री दुलीचन्द जीवित है।
१२. श्री सुखराम	सुपुत्र	श्री साहब राय	
१३. श्री लालमन	सुपुत्र	श्री हरकिशन	इस परिवार का पता नहीं।
१४. श्री तुलसीराम	सुपुत्र	श्री रामदयाल	इस परिवार में से श्रीशिवलाल सुपुत्र श्रीमोल्हड़ का परिवार जीवित है।
१५. श्री जैमलसिंह	सुपुत्र	श्री हिम्मतसिंह	इस परिवार में से हरीसिंह सुपुत्र श्री लज्जेराम का परिवार जीवित है।
१६. श्री गोपालसिंह	सुपुत्र	श्री हिम्मतसिंह	
१७. श्री धनसिंह	सुपुत्र	श्री हिम्मतसिंह	
१८. श्री हरीराम	सुपुत्र	श्री शेढू	इस परिवार में से श्री फतेहसिंह सुपुत्र श्री प्रेमराज जीवति है।
१९. श्री केवलसिंह	सुपुत्र	श्री शेढू	
२०. श्री बुधसिंह	सुपुत्र	श्री दाँतराय	इस परिवार में से श्री किरपाराम का परिवार विद्यमान है।
२१. श्री दयाराम	सुपुत्र	श्री दाँतराय	
२२. श्री मायाराम	सुपुत्र	श्री दाँतराय	
२३. श्री बालकिशन	सुपुत्र	श्री दाँतराय	
२४. श्री सेलकराम	सुपुत्र	श्री प्रेमसुख	इस परिवार में से श्री मेहरसिंह का परिवार विद्यमान है।
२५. श्री जीता	सुपुत्र	श्रीमती लालकौर	कोई नहीं है।
२६. श्री राजे	सुपुत्र	श्रीमती लालकौर	
२७. श्री रामानन्द	सुपुत्र	श्री जालिमसिंह	इस परिवार में से श्री रतीराम और काशीराम का परिवार विद्यमान है।
२८. श्री जेतूसिंह	सुपुत्र	श्री जालिमसिंह	
२९. श्री हरीसिंह	सुपुत्र	श्री जालिमसिंह	
३०. श्री मजलिस	सुपुत्र	श्री साहबराय	(ब्राह्मण) श्री दलीपसिंह का परिवार विद्यमान है।
३१. श्री महाराम	सुपुत्र		३१, ३२ व ३३ के परिवार का पता नहीं।
३२. श्री गोपाल	सुपुत्र		
३३. श्री ममदो	सुपुत्र	मुसलमान	

क्रमाँक नं० ३० व ३३ के अतिरिक्त सभी जाट जाति से सम्बन्ध रखते हैं।

-भवदीय-फतेहसिंह

समाचार प्रभाग

कन्हैयालाल कोषाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा-हरयाणा को "अध्यात्मरत्न" से सम्मानित करते आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री पश्चिमी दिल्ली नगरनिगम की स्थायी समिति के अध्यक्ष यशपाल शर्मा, दिल्ली सरकार के पूर्व वित्तमंत्री जगदशी मुखी एवं प्राचार्य अरुण आर्य।

अध्यात्म पथ (पंजी०) मासिक पत्रिका द्वारा

ऋषि पथ के पथिक, वैदिक धर्म के ध्वजवाहक, विलक्षण प्रतिभा के धनी, महान् समाजसेवी, महान शिक्षाविद्, अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों-पुरस्कारों से अलंकृत, एवं हरियाणा आर्यप्रतिनिधि सभा के कोषाध्यक्ष **श्री कन्हैयालाल आर्य को अध्यात्म रत्न।**

पं० रामप्रसाद बिस्मिल जी की पावन जयन्ती के शुभ अवसर पर स्वास्ति महायज्ञ, विराट भजन सन्ध्या एवं सम्मान समारोह का भव्य आयोजन किया गया। यह आयोजन देहली की सभी आर्य समाजों की ओर से 'बी' ब्लाक जनकपुरी में किया गया। इस समारोह में मुख्य अतिथि दिल्ली सरकार के पूर्व मंत्री एवं विधायक श्री जगदीश मुखी, दिल्ली नगर निगम के महापोर भी खुशीराम एवं मुख्य वक्ता भावनगर (गुजरात) विश्वविद्यालय के प्रो० डॉ० सुन्दरलाल कथूरिया थे। कार्यक्रम का संयोजन अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक विद्वान् आचार्य चन्द्रशेखर ने किया। सभी वक्ताओं ने पं० रामप्रसाद बिस्मिल के अभूतपूर्व त्याग, बलिदान एवं देशभक्ति की भावना को स्मरण किया। इस अवसर पर गुडगाँव निवासी कन्हैयालाल आय्र जी को उनकी अध्यात्म एवं समाजसेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए 'अध्यात्म रत्न' से विभूषित किया गया। अध्यात्म पथ परिवार भी आर्य जी को सम्मानित कर गौरवान्वित है। — **चन्द्रशेखर शास्त्री**

विमोचन एवं पुस्तकों का वितरण

मानवसेवा प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित "पाणिनीय अष्टाध्यायी प्रवचनम् का विमोचन एवं बैग व पाठ्यपुस्तकों का वितरण" दिनाँक ०६.०७.२०१४ को ११९, गुरुकुल गौतमनगर में उत्साह एवं उल्लास के साथ सम्पन्न हुआ।

पाणिनीय अष्टाध्यायी प्रवचनम् पुस्तक का विमाचन, कार्यक्रम के अध्यक्ष स्वामी प्रणवानन्द जी, मुख्य अतिथि डॉ० सुधीरकुमार आर्य (जे.एन.यु.), डॉ० विवेकानन्द शास्त्री (रोहतक), श्रीरामचन्द्र अहलावत (योगशिक्षक, दिल्ली) आदि के कर–कमलों द्वारा किया गया। तत्पश्चात् गुरुकुल गौतमनगर, गुरुकुल मँझावली, गुरुकुल पौंधा (देहरादून), नवउद्घाटित गुरुकुल केरल के ४० ब्रह्मचारियों को साठ हजार रुपये मूल्य के बैग एवं पाठ्यपुस्तकें वितरित की गई।

इस अवसर पर पाणिनीय अष्टाध्यायी प्रवचनम् के भाष्यकार स्व० आचार्य सुदर्शनदेव जी के सुपुत्र डॉ० सुधीरकुमार आर्य (जे.एन.यु.) ने अपने उद्बोधन में सभी ब्रह्मचारियों को अधिक–से–अधिक संस्कृत व्याकरण के ज्ञान को प्राप्त कर जीवन में सफल होने का उपदेश दिया। हॉलैण्ड से पधारे पण्डित जगदीश दातादीन ने कार्यक्रम की अत्यधिक प्रशंसा करते हुए रामपाल शास्त्री व मानवसेवा प्रतिष्ठान के सभी अधिकारियों की प्रशंसा की। डॉ० कँवरसिंह (प्रवक्ता, वैंकटेश्वर कॉलेज), डॉ० अजयकुमार (योगशिक्षक, जे.एन.यु.), श्री चन्द्रदेव शास्त्री (संस्कृत शिक्षक, सोनीपत), श्री रामपाल शास्त्री (मानव सेवा प्रतिष्ठान), श्री के.एम. राजन (गुरुकुल केरल), श्री विजयकुमार आर्य ने अपने उद्बोधन एवं उपस्थिति से कार्यक्रम की शोभा को बढ़ाया।

अध्यक्षीय भाषण में स्वामी प्रणवानन्द जी महाराज ने मानवसेवा प्रतिष्ठान के कार्यों की सराहना करते हुए स्व० आचार्य श्री सुदर्शनदेव जी के साथ अपने संस्मरण सुनाये तथा सभी छात्रों को पाठ्यपुस्तकें प्रदान करते हुए उन्हें जीवन में उत्तरोत्तर उन्नतिपथ पर अग्रसर रहने की प्रेरणा दी।

– सोमदेव शास्त्री
(प्रधान, मानव सेवा प्रतिष्ठान)

हमारी विशिष्ट औषधियाँ

संजीवनी तैल

यह तैल घाव के भरने में जादू का काम करता है। भयंकर फोड़े-फुन्सी, गले-सड़े पुराने जख्मों तथा आग से जले हुए घावों की अचूक दवा है। कोई दर्द या जलन किये बिना थोड़े समय में सभी प्रकार के घावों को भरकर ठीक कर देता है। खून का बहना तो लगाते ही बन्द हो जाता है। चोट की भयंकर पीड़ा को तुरन्त शान्त कर देता है। दिनों का काम घण्टों में और घण्टों का काम मिनटों में पूरा कर देता है।

मूल्य : ५०-०० रुपये

च्यवनप्राश

शास्त्रोक्त विधि से तैयार किया हुआ स्वादिष्ट सुमधुर और दिव्य रसायन (टॉनिक) है। इसका सेवन प्रत्येक ऋतु में स्त्री, पुरुष, बालक व बूढ़े सबके लिए अत्यन्त लाभदायक है। पुरानी खांसी, जुकाम, नजला, गले का बैठना, दमा, तपेदिक तथा सभी हृदयरोगों की उत्तम औषध है। स्वप्नदोष, प्रमेह, धातुक्षीणता तथा सब प्रकार की निर्बलता और बुढ़ापे को इसका निरन्तर सेवन समूल नष्ट करता है। निर्बल को बलवान् और बूढ़े को जवान बनाने की अद्वितीय औषध है। च्यवन ऋषि इसी रसायन के सेवन से जवान होगये थे।

मूल्य : १ किलो २०० रुपये

नेत्रज्योति सुर्मा

सुर्मे तो बाजार में पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं परन्तु इतना लाभप्रद और सस्ता सुर्मा मिलना कठिन है। इसके लगाने से आंखों के सब रोग जैसे आंखों से पानी बहना, खुजली, लाली, जाला, फोला, नजर की कमजोरी आदि विकार दूर होते हैं तथा बुढ़ापे तक आंखों की रक्षा करता है। दुखती आंखों में भी इसका प्रयोग अत्यन्त लाभप्रद है।

मूल्य : २५-०० रुपये

बलदामृत

हृदय और उदर के रोगों में रामबाण है, इसके निरन्तर प्रयोग से फेफड़ों की निर्बलता दूर होकर पुनः बल आजाता है। पीनस (सदा रहनेवाला जुकाम और नजले) की औषधि है। वीर्यवर्धक, कासनाशक, राजयक्ष्मा, श्वास (दमा) के लिए लाभकारी है। रोग के कारण आई निर्बलता को दूर करता है तथा अत्यन्त रक्तवर्धक है।

मूल्य : १३०-०० रुपये

आर्य आयुर्वेदिक रसायनशाला, गुरुकुल झज्जर

हमारे प्रमुख प्रकाशन

१.	व्याकरणमहाभाष्यम् (५ जिल्द) (प्रदीप उद्योत, विमर्शसहित)	१०५०-००
२.	अष्टाध्यायी (पाणिनि)	१५-००
३.	कारिकाप्रकाश (सुदर्शनदेव)	२०-००
४.	लिङ्गानुशासनवृत्ति (सुदर्शनदेव)	१५-००
५.	फिट्सूत्रप्रदीप (सुदर्शनदेव)	१०-००
६.	छन्दःशास्त्रम् (व्रतिमंगलावृत्ति)	४५-००
७.	काव्यालकारसूत्राणि (व्रतिमंगलावृत्ति)	२५-००
८.	निरुक्त (हिन्दीभाष्य) (चन्द्रमणि)	२५०-००
९.	योगार्यभाष्य (आर्यमुनि)	२०-००
१०.	सांख्यार्यभाष्य (आर्यमुनि)	४०-००
११.	मीमांसार्यभाष्य (३ भाग)	२६०-००
१२.	वैशेषिकार्यभाष्य (आर्यमुनि)	६०-००
१३.	न्यायार्यभाष्य (आर्यमुनि)	१००-००
१४.	वेदान्तार्यभाष्य (आर्यमुनि)	१२०-००
१५.	महारानी सीता (स्वामी ओमानन्द)	१००-००
१६.	अष्टाध्यायीप्रवचनम् (६ भाग)	६५०-००
१७.	छान्दोग्योपनिषद्भाष्यम् (शिवशंकर)	२५०-००
१८.	वृहदारण्यकोपनिषद्भाष्यम् (शिवशंकर)	१५०-००
१९.	उपनिषत्समुच्चय (पं० भीमसेन)	१००-००
२०.	ओरिजनल फिलासफी ऑफ योगा	२५०-००
२१.	मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प	३०-००
२२.	दयानन्दप्रकाश (स्वा० सत्यानन्द)	५०-००
२३.	धर्मनिर्णय (१-४ भाग)	८०-००
२४.	वैदिकविनय (१-३ भाग)	६०-००
२५.	देशभक्तों के बलिदान	१२५-००
२६.	सत्यार्थप्रकाश (दयानन्द)	२००-००
२७.	स्वतन्त्रता संग्राम में आर्यसमाज का योगदान	४०-००
२८.	यजुर्वेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	१००-००
२९.	सामवेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	८०-००
३०.	अथर्ववेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	३५०-००
३१.	ऋग्वेद संहिता (मन्त्रानुक्रमणि)	३५०-००
३२.	सामवेद पदसंहिता	२५-००
३३.	ओमानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ	१००-००
३४.	सुखी जीवन (सत्यव्रत)	३०-००
३५.	महापुरुषों के संग में (सत्यव्रत)	१५-००
३६.	घर का वैद्य (१-५ भाग)	१००-००
३७.	दैनंदिनी (सत्यव्रत)	२५-००
३८.	ब्रह्मचर्य के साधन (१-११ भाग)	६०-००
३९.	संस्कृतप्रबोध (आचार्य बलदेव)	२०-००
४०.	संस्कारविधि (स्वामी दयानन्द)	५०-००
४१.	स्वामी ओमानन्द ग्रन्थमाला (४ जिल्दों में)	१२००-००
४२.	दयानन्द लहरी (मेधाव्रत आचार्य)	१५-००
४३.	विरजानन्दचरितम् (मेधाव्रत आचार्य)	१५-००
४४.	रामायणार्यभाष्य (दो भाग)	३२०-००
४५.	महाभारतार्यभाष्य (दो भाग)	४५०-००
४६.	स्वामी ओमानन्द जीवन (वेदव्रत शास्त्री)	४००.००

आर.एन.आई. द्वारा रजि. नं. 11757
पंजीकरण संख्या-P/RTK/85-3/2011-13

सुधारक लौटाने का पता :-
गुरुकुल झज्जर, जिला झज्जर (हरयाणा)-124103

ग्राहक संख्या

श्री ____________

स्थान ____________

डा० ____________

जिला ____________

प्रकाशक आचार्य विजयपाल गुरुकुल झज्जर ने आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, गोहाना मार्ग, रोहतक में मुद्रक-वेदव्रत शास्त्री के प्रबन्ध से छपवाया।